अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

सौर भाद्र, २९ शक १८७९ सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार

वार्षिक मूल्य ६) एक प्रति २ आना

अेअि तो तोमार प्रेम, ओगो हृदयहरण।
अअि-जे पाताय आलो नाचे सोनार बरन।
अेअि-जे मधुर आलस भरे
मेघ भेसे आकाश-’ परे,
अेअि-जे बातास देहे करे अमृतक्षरण।
अेअि तो तोमार प्रेम, ओगो हृदयहरण।
प्रभात-ओलोर धाराय आमार नयन भेसेछे।
ओअि तोमारि प्रेमेर वाणी प्राणे अेसेछे।
तोमारि मुख अै नुअेछे,
मुखे आमार चोख थुयेछे,
आमार हृदय आज छुँयेछे तोमारि चरण।

—कवींद्र रवींद्र

वर्ष-३, अंक-५१ 卐 राजघाट, काशी 卐 शुक्रवार, २० सितम्बर, ’५७

भूदान और रचनात्मक कार्यकर्ताओं के लिए आत्मचिन्तन की वेला !

(अ० वा० (अण्णासाहब) सहस्रबुद्धे)

“फुलफिलमेंट आफ़ कंस्ट्रक्टिव वर्क इज स्वराज्य” (रचनात्मक कामों की परिपूर्ति ही स्वराज्य है।) ऐसा महात्माजी ने विधायक कार्यक्रम के सम्बन्ध में कहा था। विविध दिशा में जो विधायक काम होता रहेगा, उसका परिणत स्वरूप सामाजिक तथा आर्थिक क्रान्ति में होगा ही। साधन और साध्य में वे फर्क नहीं करते थे। जैसे साधन होंगे, तदनुसार साध्य की प्राप्ति होगी या साध्य तक हम पहुँच जायेंगे। साधन शुद्ध रहेंगे, तो ही साध्य शुद्ध रह सकता है, यह अहिंसक क्रान्ति का बुनियादी सिद्धान्त है। जिन साधनों की साधना हम करेंगे, उन्हींका परिणत स्वरूप हमें साध्य के रूप में या जो हम परिवर्तन लाना चाहते हैं, उसमें मिलेगा। इस दृष्टि से हमारे आज के सारे विधायक कामों की तरफ हमें देखना चाहिए और उनके बारे में फिर से विचार करने की आवश्यकता यदि पैदा होती हो, तो हमें विचार करना चाहिए।

आत्मप्रत्यय की कसौटी पर

स्वराज्य के पहले खादी-ग्रामोद्योग, गो-सेवा आदि कामों का स्वराज्य से अनुस्युत अनुबंध था। चरखा हम चलाते रहेंगे, तो उसमें से स्वराज्य दिन-प्रतिदिन नजदीक आ जायगा, ऐसा हर कोई मानता था। एक तरफ काँग्रेस का राजनीतिक काम चलता था, दूसरी तरफ गांधीजी के मार्गदर्शन में विधायक प्रवृत्तियाँ चलती थीं। एक-दूसरे के पूरक बन कर वे काम करते थे और एक की शक्ति दूसरे दल के लिए पूरक होती थी। इसके साथ-साथ हरेक (रचनात्मक) विधायक प्रवृत्ति स्वराज्य की तरफ हमें ले जा रही है, ऐसा आत्म-प्रत्यय भी काम करने वालों के दिलों में भरा हुआ रहता था। राजनीतिक आजादी देश को मिली, सत्ता हस्तांतरित हो गयी, लेकिन सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थिति वैसी ही बनी रही। गांधीजी के दिल में जो स्वराज्य की कल्पना थी, वह राजनीतिक दृष्टि से सफल हुई, लेकिन आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से परिवर्तन नहीं हो सका। अतः आज के हमारे विधायक कामों से क्रान्ति की ओर कदम बढ़ रहे हैं, ऐसा आत्म-प्रत्यय का भान यदि हरेक कार्यकर्ता को होता है, तो हमें मान लेना चाहिए कि आज के कामों से, खादी-ग्रामोद्योगों के फैलाव से या देश में दूसरे जो निर्माण के काम हो रहे हैं, उन कामों से हम सामाजिक तथा आर्थिक क्रान्ति की तरफ जायेंगे।

खादी और ग्रामोद्योग-बोर्ड की स्थापना साढ़े तीन-चार साल पहले हुई। स्वराज्य मिलने के बाद हम लोग ही कहते आये थे कि खादी और ग्रामोद्योग के कामों को सरकार के द्वारा बढ़ावा मिलना चाहिए और उनको बढ़ावा देने की दृष्टि से नीति अपनानी चाहिए। इस विचार को कुछ हद तक सरकार की तरफ से मंजूर किया गया और उसमें से खादी-बोर्ड की स्थापना हुई। देश में बेकारी बढ़ रही है, गाँव में अर्ध-बेकारी भी काफी है। उसका इलाज खादी-ग्रामोद्योगों से होता है, तो सरकार भी इन प्रवृत्तियों को बढ़ाने का काम करेगी। बेकारी की समस्या हल करने की दृष्टि से खादी-बोर्ड का काम चलता रहेगा। माप का गज यह रहेगा कि गाँव में हमने कितने लोगों को कितनी मजदूरी बाँटी और किस हद तक बेकारी कम हुई। एक तरह से रिलीफ देने का ही यह काम है। उसी दृष्टि से गवर्नमेण्ट आज उसकी तरफ देखती है और खादी-बोर्ड के काम की सफलता, बेकारी की समस्या का हल करने में बोर्ड कहाँ तक सहायक हुआ, इसके ऊपर निर्भर रहेगी।

देश भर में विकास-योजनाओं का काम आज चल रहा है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना जब सन् १९६१ में पूरी हो जायगी, तब इन विकास-योजनाओं के द्वारा हर गाँव में पहुँचने की व्यवस्था हो जायगी। विकास-योजनाओं के द्वारा मुख्यतः निर्माण का काम होता है। खेती का उत्पादन बढ़ाने का मुख्य काम रहता है। गाँव तक रास्ते ले जाने, गाँव में पाठशालाओं के लिए मकान बनवाने, पीने के पानी की व्यवस्था करने आदि के कल्याणकारी काम भी विकास-योजनाओं के द्वारा हाथ में लिये जाते हैं। धीरे-धीरे ग्राम-पंचायतें खड़ी करना, सहकारी संस्थाएँ निर्माण करना और इन सारे कामों की जिम्मेवारी उन संस्थाओं के ऊपर सौंप देना, यह विकास-योजनाओं का लक्ष्य है। जब ग्राम-पंचायत आदि संस्थाओं का संगठन देश भर में खड़ा होगा, तो इन विकास-योजनाओं के द्वारा विशेषज्ञ लोगों की सहायता लोगों को पहुँचायी जायगी और सारे काम गाँववाले ही करने लगेंगे। इस ओर विकास-योजनाओं को जाना होगा। यद्यपि आज सारी योजनाएँ सरकार के द्वारा चल रही हैं, तो भी अंत में स्थानीय जन-शक्ति खड़ी हो, काम आगे बढ़ता रहे, यह विकास-योजनाओं का लक्ष्य है। सरकार भी काम के लिए कर्मचारियों का दल सदा खड़ा रखना नहीं चाहती है।

सर्वोदय के कामों की दृष्टि क्या हो ?

आज देश भर में सर्वोदय-विचार को मानने वाले, गांधीजी की प्रेरणा से विधायक काम करने वाले जो विधायक कार्यकर्ता हैं, उनका तथा उनके द्वारा आज जो संस्थाएँ

रामराज्य कैसा ?

हम वैसा रामराज्य चाहते हैं, जिस राज्य में राम अपनी चिंता नहीं करता था, लक्ष्मण की चिंता करता था; सीता की ज्यादा चिंता करता था। लक्ष्मण भी पहले रामजी की चिंता करता था। राम भरत की चिंता करता था, भरत राम की चिंता करता था। राम को बंदरों की, हनुमान की चिंता थी, हनुमान को बंदरों की, रामजी की चिंता थी! यह है रामायण, यह हर एक घर में होता है, इसलिए इस असार संसार में भी सुख मिलता है। अगर यह कुटुम्ब में नहीं होता, तो संसार निःसार हो जाता। घर में क्या होता है? हरेक अपनी चिंता नहीं करता, दूसरों की चिंता करता है, दूसरों के लिए स्वयं त्याग करता है। इसलिए घर में जो त्याग का तत्त्व है, वह अगर हम समाज में लाने की कोशिश करते हैं, तो घर में जो शांति और आनन्द है, उसकी मात्रा बढ़ेगी। इस वास्ते सारे गाँव का एक परिवार बनाना है। इसीको हम सर्वोदय-समाज कहते हैं। हम चाहते हैं, ऐसा सर्वोदय समाज सर्वत्र हो।

(मरकेरी, कुर्ग, ७-९-’५७) —विनोबा

www.vinoba.in

चलायी जा रही हैं, उनका स्थान आगे ग्रामीण जीवन में क्या रहेगा या क्या रहना चाहिए, यह एक महत्त्व का सवाल है। यदि विधायक प्रवृत्ति को फैलाने की दृष्टि से विचार किया जाय, तो हमें भी अपने काम को ज्यादा से ज्यादा विकेन्द्रित करने की दिशा में कदम बढ़ाना चाहिए। हर एक क्षेत्र में खादी-काम करने वालों को सोचना चाहिए कि उनका काम ग्राम-पंचायतें उठा लें, लोगों के हाथ में हम अपना काम धीरे-धीरे सौंप दें और लोगों की संगठन-शक्ति बढ़ाने का काम ही सिर्फ हम करें। आज देश भर में खादी की बड़ी-बड़ी संस्थाएँ बनी हैं और बहुत से विधायक कार्यकर्ता मानते हैं कि ऐसी बड़ी-बड़ी संस्थाएँ बनी रहेंगी, तो ही खादी का काम सही दिशा में चलता रहेगा! यदि करोड़ों की खादी बनानी हो और सिर्फ उत्पादन का ही ख्याल करना हो, तो सम्भव है कि इन बड़ी-बड़ी संस्थाओं से ज्यादा काम बनेगा। केन्द्रित व्यवस्था में कार्य-क्षमता बढ़ती है, ऐसा भी कुछ समय के लिए दिखेगा, लेकिन थोड़े समय के बाद ही उनके काम को भी सीमित होना पड़ेगा। किसी एक संस्था को सारे देश में व्यापक बनाना मुट्ठी भर संस्थाओं की शक्ति के बाहर का काम है, ऐसा आत्म-प्रत्यय संस्था के कार्यकर्ता महसूस करने लगेंगे। संस्था का ही अपना एक बोझ खड़ा हो गया है और भूदान-मूलक क्रान्ति में भाग लेने में वह बोझ मदद-रूप होने के बदले एक अड़चन-रूप बन जाता है, इसका भान भी कार्यकर्ताओं को को होने लगेगा। यह अनुभव आने के पहले ही यदि हम सोचें, हमारा काम भी विकेन्द्रित कर देने की दिशा में हम कदम बढ़ायें, ग्राम-पंचायतें आदि संस्थाओं से आज जो हम उदासीन हैं, उसके बदले उनकी ही शक्ति से देश बढ़ने वाला है, इस श्रद्धा से उनको काम सौंप देने की दिशा में हम कदम बढ़ायें और एक विशेषज्ञ के नाते उनका काम ठीक ढंग से हो, इस दिशा में भी हम कोशिश करते रहें, तो देश में खादी-ग्रामोद्योगों को आगे ले जाने को बुनियाद डाली जा सकेगी।

कहीं हम पिछड़ न जायँ!

खादी-बोर्ड का काम रिलीफ का काम है। विकास-योजनाओं का काम निर्माण (डेवलपमेण्ट) का काम है और हमारा ही काम सिर्फ क्रान्ति की तरफ ले जाने वाला है, इस तरह का विचार हमें नहीं करना चाहिए। यदि हमारा ध्येय सामाजिक तथा आर्थिक क्रान्ति है, तो उस ध्येय की तरफ पहुँचने का रास्ता भी हमें साफ दीखना चाहिए। राजनीतिक क्रान्ति मध्यम वर्ग की क्रान्ति थी। उस क्रान्ति को बहुजन समाज का सहारा रहा, उनकी अप्रत्यक्ष रूप से सम्मति रही, फिर भी क्रान्ति के नेता मध्यमवर्गीय रहे और क्रान्ति का लाभ भी उन्हींको मिला। भूदान-आन्दोलन से जो सामाजिक तथा आर्थिक क्रान्ति होने जा रही है, वह हम मुट्ठी भर कार्यकर्ता लोग नहीं कर सकेंगे। लाखों की तादाद में श्रमजीवियों को इस क्रान्ति का वाहन बनना पड़ेगा। उनके ही नेतृत्व में गाँव-गाँव में सामाजिक तथा आर्थिक बदल करने की दिशा में संगठित रूप से प्रयत्न होगा। इन करोड़ों लोगों को यदि आज के हमारे खादी-ग्रामोद्योग आदि विधायक कार्य स्पर्श नहीं करते हैं, उनके हृदय तक पहुँचने के वाहन नहीं बनते हैं, तो इन कामों से हम किस तरह से आगे बढ़ सकेंगे, इसका चिन्तन आज देश में होना चाहिए। हृदय-परिवर्तन से जो क्रान्ति होगी, उसमें सरकारी कर्मचारियों का भी आज का रुख बदलेगा, ग्राम-पंचायतें आदि स्थानीय संस्थाओं को भी उस दिशा में सोचना पड़ेगा और गाँव-गाँव में ग्रामदानमूलक संस्थाएँ बना कर जनता काम करने लगेगी। चाहे वह खेती की संस्था हो या श्रम-आधारित भू-सेना जैसा संगठन हो, उस दिशा में ही देश के विधायक काम को जाना पड़ेगा। उस क्रान्ति के वाहक हमारे जैसे कार्यकर्ता नहीं रहेंगे, श्रम-आधारित जीवन-यात्रा चलाने वाले कार्यकर्ता ही उस क्रान्ति के वाहक बनेंगे। आज की विधायक संस्थाओं से उस दिशा में जाने का काम नहीं होता है, तो ये संस्थाएँ भी भूदान-क्रान्ति का वाहन नहीं बनेंगी। इस दृष्टि से ऐसा साफ दीखता है कि सन् १९४५ के साल में गांधीजी ने अखिल भारत चरखा-संघ को गाँव-गाँव और घर-घर तक पहुँचने का जो आदेश दिया था, उसीको हमें खादी का मध्य-बिन्दु मानना चाहिये और आज का हमारा केन्द्रित काम विकेन्द्रित कर देना चाहिए। 'विकास-योजनाओं द्वारा यह काम नहीं होगा, ग्राम-पंचायतों के द्वारा यह काम नहीं बनेगा, गाँव में सहकारी आदि जो संस्थाएँ बनती हैं, वे भी इस काम में हाथ नहीं बँटायेंगी', इस तरह की अश्रद्धा से हमें आगे नहीं बढ़ना चाहिए। आखिर में उनके ही द्वारा सारे काम होने वाले हैं। आज के हमारे काम से तो उनके हृदय-परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू हो जानी चाहिए। अतः उनको सही दिशा में ले जाने का काम हम किस तरह करेंगे, इस दिशा में हमारा चिन्तन चलना चाहिए।

भूदान-आन्दोलन को बढ़ावा देने का काम एक अलग कार्यकर्ता-वर्ग करता रहे और विधायक कार्यों से उनको बल देने का काम विधायक संस्थाएँ करती रहें, यह श्रम-विभाजन एक हद तक इस आन्दोलन को ले आया है और एक चक्रव्यूह बन गया है। अब उसमें से बाहर निकलने का काम भूदान में काम करने वाले इने-गिने कार्यकर्ता नहीं कर सकेंगे। विधायक-कार्यकर्ताओं को अपने काम को ही स्थानीय संस्थाओं के ऊपर अब सौंप देना होगा। यदि ऐसा नहीं हो सकता है और वैसा करने का समय या परिस्थिति आज देश में नहीं है, तो भूदान-क्रान्ति की गति कुछ समय के लिए मंद होती जा रही है, ऐसा दिखेगा और योग्य समय आते ही हमारे ऊपर से पानी बह जायगा, क्रान्ति आगे बढ़ेगी और हम लोग पीछे रह जायेंगे। इसलिए आत्म-परीक्षण का समय आ गया है, ऐसा समझ कर हर एक कार्यकर्ता इस दिशा में सोचे, चिन्तन करे, ऐसी हमारी नम्र प्रार्थना है।

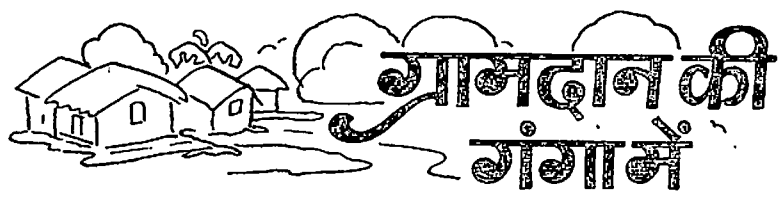

—बंबई प्रदेश की मोमिनाबाद तहसील में मनूर गाँव के लोगों ने संपूर्ण गाँव ग्रामदान में देने का संकल्प किया है।

—वर्धा तहसील में पाँच नये ग्रामदान प्राप्त हुए: सौदापुर, गणेशपुर, रघाला, कानगोकुल, इरापुर।

—वर्धा जिले की आर्वी तहसील में अल्लीपुर गाँव ग्रामदान में मिला।

—बालाघाट जिले में अगस्त में तीन ग्रामदान मिले:

ग्राम	परिवार	जनसंख्या	रकबा
चंगेरा	२३	१५०	४००
निलागोंदी	९२	३५०	४५०
डुडवा	७०	३९५	७२३

—इलाहाबाद जिले की सिराथू तहसील में मौजा कोरियों का पुरवा बाकरगंज ग्राम ग्रामदान में मिला है।

—सांबरकांठा की ग्रामदान पदयात्रा में ४ नये ग्रामदान प्राप्त हुए: (१) शामलपुर, (२) भवानपुर, (३) गोढ (पल्ला) और (४) ढूढेरा।

—गुजरात में अब कुल ग्रामदान ३३ हो गये हैं।

—तमिलनाडु में तंजाऊर जिले में बालकृष्णापुरम् (३३६ एकड़, जनसंख्या २३१) और संपतनगर (६४ एकड़, जनसंख्या २१) ये दो गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुए।

—धारवाड़ जिले में भूजयंती के अवसर पर ग्रामदान-यात्रा में चन्नापूर और चौरगुड्ड, ये दो गाँव ग्रामदान में मिले।

—आंध्र प्रदेश के महबूबनगर जिले में पोलकमपल्ली गाँव ग्रामदान में मिला। जनसंख्या २००० है और ६००० एकड़ भूमि है। आंध्र प्रदेश में प्राप्त कुल ८५ ग्रामदानी गाँवों में यह गाँव सबसे बड़ा है।

—गुंटुर जिले में प्रथम ग्रामदान के रूप में बापतला तालुके में ४६ परिवार वाला भुवनावरी पालेम हरिजनपल्ले ग्राम मिला।

"हम सफल अवश्य होंगे। सैकड़ों आदमी इसमें काम आयेंगे, उनकी जगह सैकड़ों और खड़े हो जायेंगे। प्रभु की जय! सम्भव है कि मैं यहाँ विफल होकर मर जाऊँ, पर कोई और यह काम जारी रखेगा। तुम लोगों ने रोग भी जान लिया और दवा भी। अब केवल विश्वास रखना। हम धनी या अमीर लोगों की परवाह नहीं करते, हृदयहीन मस्तिष्कसार लेखकों और उनके कठोर लेखों की भी परवाह नहीं करते। हममें अग्निमय विश्वास और अग्निमय सहानुभूति होनी चाहिए। जीवन तुच्छ है, मरण भी तुच्छ है, भूख तुच्छ है और जाड़ा भी तुच्छ है। आगे बढ़ते रहो— प्रभु हमारे नायक हैं। पीछे मत देखो, कौन गिरा, इसकी खबर मत लो—आगे बढ़ो, सामने चलो। भाइयो, इसी तरह हम आगे बढ़ते जायेंगे और एक गिरेगा, तो दूसरा वहाँ पर खड़ा हो जायगा।

—विवेकानंद

www.vinoba.in

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः

(मोतीलाल केजरीवाल)

संताल परगने की स्थिति के प्रकाश में जब मैं भूदान-आंदोलन पर विचार करता हूँ, तो मालूम होता है कि निश्चय ही सौ से अधिक कार्यकर्ता अपने पारिवारिक कामों अथवा आजीविका-सम्बन्धी व्यापारों को छोड़ कर बिहार में भूदान अथवा भूमिक्रान्ति के सम्बन्ध में ही सोचते, विचारते रहते हैं। उनका बैठना, उठना, चलना, खाना, पीना आदि भी भूमिक्रान्ति का स्वप्न देखते हुए ही चलता है। यह तो ठीक है, किन्तु इसके साथ ही मुझे यह भी कहना चाहिए कि भूमि-क्रान्ति की दिशा में कोई ठोस काम वे नहीं करते। सूरज उगता है और शाम को ढल जाता है। १९५७ के सम्वत्सर का एक-एक दिन पूरा हो जाता है। इस तरह इस सम्वत्सर के ८ मास पूरे हो गये। नौवाँ चल रहा है। किन्तु हम लोग अब तक कोई ऐसा काम नहीं कर सके, जिससे क्रान्ति नजदीक आती हुई दिखायी पड़े। जिले के प्रमुख कहलाने वाले कार्यकर्ता अर्थात् मेरे जैसे आदमी का कार्यक्रम बनता है और सार्वजनिक सभाएँ होती हैं अथवा सहानुभूतिशील पाँच-दस व्यक्तियों के साथ बैठ कर बातें की जाती हैं अर्थात् थोड़े या ज्यादह लोगों के बीच मेरा भाषण हो जाता है, किन्तु घर-घर जाकर अथवा श्रीमानों से मैं जमीन नहीं माँगता। थोड़ा-सा प्रवचन करते-करते ही मैं क्लान्त हो जाता हूँ और आराम करने लगता हूँ। अभी साधुमना श्री लक्ष्मी बाबू से बातें हुईं। हजारीबाग जिले का कई दिनों तक उन्होंने हाल ही में भ्रमण किया है। मैंने उनसे पूछा कि क्या वे जिले के व्यापारियों, खानमालिकों और जमीन के कुछ जोतदारों से भी मिले थे या नहीं? उन्होंने कहा, नहीं, केवल कार्यकर्ताओं से!

हमने अपने जिले में देश की एक परम् विभूति श्री जयप्रकाश नारायणजी को बुलाया, श्रेष्ठ विचारक दादा धर्माधिकारीजी सरीखों को भी कष्ट दिया। ये महानुभाव आये, इनका सार्वजनिक भाषण हुआ, भाषण का कम या ज्यादा प्रभाव भी पड़ा, किन्तु हम कार्यकर्ताओं ने उससे फायदा नहीं उठाया। हम लोगों को चाहिए था कि स्थानीय दो-चार प्रभावशाली लोगों या श्रीमानों के यहाँ हम उन्हें भी ले जाते और स्वयं भी टोलियों में बँट कर उन-उन स्थानों में घूमते, जहाँ पर उनके भाषण का प्रभाव पड़ा था। बिहार प्रान्त के बहुतेरे कार्यकर्ता, जो भूमि-क्रान्ति को मूर्तिमान देखना चाहते हैं तथा इसके लिए घर-द्वार तक छोड़ बैठे हुए हैं, अपना समय व्यर्थ बिता रहे हैं। आश्रमों आदि में स्थानों में उनका दिन उगता है और ढल जाता है!!

उपनिषद् में कहा है कि सत्य, सम्यक् ज्ञान, ब्रह्मचर्य और तपस्या के द्वारा जब मनुष्य के दोष क्षीण हो जाते हैं, तब आत्मदर्शन होता है। सर्वोदय की सिद्धि समष्टि-रूप से होने वाली है। इसके लिए भी हम लोगों को उपनिषद् में वर्णित उक्त चारों बातों को अपनाना होगा अर्थात् व्यवहार में लाना होगा। तपस्या अवश्य ही कष्ट-साध्य है। दरवाजे-दरवाजे पर जाना और इसलिए कहीं-कहीं अपमानित भी हो जाना तथा किसी दिन भूखे भी रह जाना पड़ेगा। पैदल घूमना, खाने-पीने का ठिकाना नहीं, इत्यादि बातों को सहर्ष सहना तथा अपने उत्साह एवं धीरज में कमी न आने देना ही तपस्या है। कोई जमीन न दे अथवा दो-चार कड़ी बातें भी कह दे, तो भी दुखी न होना, बल्कि निर्विकार रहना भी तपस्या है। सत्य, सम्यक् ज्ञान और संयमित जीवन के द्वारा ही तपस्या में पूर्णता आती है। कार्यकर्ताओं को चाहिए कि वे घोर तपस्या करें। पौराणिक कथाओं के अनुसार तपस्यारत व्यक्ति कभी निराहारी रह कर, कभी पवन पीकर और कभी पत्ते खाकर तपस्या करते थे। देहातों में चलते-चलते यदि हम कार्यकर्ताओं को दो मुट्ठी चूड़ा भी नसीब हो या न हो और वे भूखे रह जायँ, तो यह भी तपस्या ही होगी, बशर्ते कि कार्यकर्ता को हार्दिक प्रसन्नता रहे।

यह बिल्कुल ठीक है कि यह आत्मसाक्षात्कार भाषण या प्रवचन कर लेने से, या भारी मेधा या बुद्धिमत्ता से या बहुत पढ़ लेने या सुनते रहने से ही नहीं होता—"नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः न मेधाय न बहुना श्रुतेन।" इस दृष्टि से हम लोगों को भी अपने कार्यक्रम में थोड़ा परिवर्तन लाना होगा। देश के गौरव श्री जयप्रकाश नारायणजी, दादाजी, धीरेन्द्र भाई, श्री लक्ष्मी बाबू प्रभृति महानुभाव जहाँ-जहाँ जावें, वहाँ वे दो-चार-दस घरों में तो अवश्य ही जाकर भूमि एवं अन्य मालकियत छोड़ने के लिए जरूर निवेदन करें। हम कार्यकर्ताओं के लिए यह आदर्श होगा। मेरे विचार में, इसका प्रभाव पड़ेगा। पौराणिक युद्धों का जहाँ वर्णन है, वहाँ देखने में आता है कि पैदल सेना पैदल सेना से, अश्ववाहिनी शत्रु-पक्ष की घुड़-सवारी सेना से और हस्तीसेना गजवाहिनी से भिड़ जाती थीं। रथी रथी से और महारथी महारथी से युद्ध करते थे। क्यों नहीं हम लोग भी इस नीति को अपनावें? सौ एकड़ से अधिक जमीन वालों से जयप्रकाशजी, दादाजी और धीरेन्द्र भाई मिलें। ५० एकड़ से अधिक वालों से श्री लक्ष्मी बाबू और वैद्यनाथ चौधरीजी मिलें। छुटभइयों के लिए हम लोगों को छोड़ दें। प्रान्त के बड़े व्यापारियों या बड़े जोतदारों से शायद ही कोई कार्यकर्ता मिलता हो। उन बड़ों की दुनिया पूर्ववत् चल रही है। विनोबा की पदयात्रा की खबर उनको नहीं। वे "भूदान-यज्ञ" तक तो पढ़ते नहीं!

पदयात्राओं, सार्वजनिक सभाओं, हाट-बाजार के प्रचार आदि के द्वारा हम लोग नीचे से उन लोगों को उठावेंगे, जो लोग गरीब कहलाते हैं। श्रीमानों को उठाने के लिए श्री जयप्रकाशजी सरीखों को लगना चाहिए। यदि ऐसा किया जाय, तो क्रांति का अरुणोदय हमें जल्द ही दिखलायी देगा।

बच्चों के बीच विनोबाजी

(दामोदरदास मूँदड़ा)

विद्यालय के शिक्षकों ने बच्चों के लिए अलग से समय माँगा था। बानर-सेना से विनोबा का कमरा खचाखच भर गया था। "हिंदी कौन-कौन जानते हैं," विनोबा ने बातचीत शुरू कर दी। सबने हाथ ऊँचे कर दिये। विनोबा ऐसे छोड़ने वाले थोड़े ही थे। एक बालिका को निकट बुला कर कहा—"अच्छा, हिंदी में भूदान पर दो शब्द बोलो।" बस, उस बालिका को तो मानों 'दो शब्दों' से धीरज ही बँध गया। दो ही शब्द बोली—"बाबा—भूदान!" जब विनोबा ने देखा कि गाड़ी का एंजिन आगे बढ़ने की गुंजाइश नहीं है, तो उस बालिका को 'शाबास' कह कर अपने स्थान पर बैठने को कहा और पुनः प्रश्न पूछना शुरू किया—"आँखें कितनी हैं?"

'दो'

दोनों उँगलियों को दिखा कर और आँखें बड़ी-बड़ी बना कर बानर-सेना ने एकसाथ पुकार की। समझे कि अब नाक और हाथ का सवाल शायद पूछा जायगा। पर विनोबा ने तो मर्म पहचान लिया था। दूसरा सवाल पूछा—"एक आँख तो मलयालम (भाषा) है, दूसरी?"

अब लड़कों ने भाँप लिया कि क्या बीतने वाली है! फिर भी हिम्मत थोड़े ही हारने वाले थे? हारतें तो विनोबा भी कहाँ उन्हें हारने देने वाले थे? अविलम्ब विनोबा को पुनः जवाब मिला: 'हिंदी।' 'हिंदी' को बालगोपालों के मुख से यह आशीर्वाद ही मिला। लेकिन जवाब में इस बार बच्चों की आवाज कुछ-कुछ दबी जरूर नजर आयी। वे भी समझ गये कि अब और कुछ बीतने वाली है और तैयार भी हो चुके थे—विनोबा के अगले प्रश्न का जवाब देने के लिए। "तो बताइये, आप सब लोग एक आँखवाले हैं या दो?" और विनोबा के मुख से 'दो' का उच्चारण हो, उसके पहले ही सबके सब हाथ और शायद दो-दो ऊँचे हो गये! दो आँखों की मदद में हाथ भी अकेला कैसे दौड़ेगा?

"तो आज शाम को हम हिंदी में ही बोलेंगे। अनुवाद नहीं होगा।" बस, अब की बार बच्चे कुछ असमंजस में पड़े दिखायी दिये। लेकिन केवल एक क्षण! वे ऐसे आसानी से ठगे जाने वाले नहीं थे। विनोबा का इशारा समझ गये थे। फिर भी बोले—"जी नहीं, अनुवाद होगा।"

सारा कमरा बच्चों के हास्योन्माद से गूँज उठा। बड़े भी अपने को रोक नहीं पाये।

बच्चों की कसौटी कहीं अधिक न हो जाय, इसलिए विनोबा ने चट से विषय बदल दिया।

"अच्छा बताओ—हवा किसकी।"
"सबकी"
"पानी किसका?"
"सबका"
"धूप किसकी?"
"सबकी"
"जमीन किसकी?"
"सबकी!"

"शाबास! जो यह मानते हों कि जमीन किसी एक की नहीं, सबकी है—सबके लिए है, वे हाथ ऊँचा करें।"—और सबके सब हाथ ऊँचे हो गये।

'प्रस्ताव एक राय से पास?' 'पास'—बानर-सेना की गर्जना से पुनः एक बार वातावरण गूँज उठा। गरीबी और अमीरी का अंतर पाटने के लिए नील-नल-जांबवंत सभी निकल पड़े। विनोबा ने उन्हें दीक्षा जो दे दी थी: "जमीन किसकी? सबकी!"

---

www.vinoba.in

तंत्र-मुक्ति एवं निधि-मुक्ति के बाद

(ठाकुरदास बंग)

सत्तावन् साल का दो-तिहाई भाग समाप्त हो गया है। सत्तावन् में सारी सत्प्रवृत्तियों को आवाहन करना है। इस आवाहन में सुलभता हो और भूदान-ग्रामदान जनआन्दोलन बने, इसलिए विनोबाजी ने छप्पन के अन्त में तंत्र-मुक्ति एवं निधि-मुक्ति की। इस निर्णय को अब आठ माह हो गये हैं। अब समय आया है कि तंत्र-मुक्ति एवं निधि-मुक्ति काल में जो परिस्थिति पैदा हुई, उस पर हम सोचें।

स्वाभाविक रूप से ये दो सवाल मन में उठते हैं कि तंत्र-मुक्ति के एवं निधि-मुक्ति के कारण देश में आन्दोलन गहरा हुआ है या नहीं और आन्दोलन का आकार घटा है या बढ़ा? देश के भिन्न-भिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न परिस्थिति है। लेकिन कुल मिला कर आन्दोलन गहरा हुआ है। कार्यकर्ताओं का आत्मविश्वास एवं स्वावलंबन की प्रवृत्ति बढ़ी है। कई स्थानों पर कार्यकर्ता नयी-नयी सूझबूझ बतला रहे हैं। आपस का परस्परावलंबन बढ़ा है, क्योंकि अब वही आधार है। ऊपर से कोई बात हम पर लादी नहीं जायगी, इस कारण असन्तोष घटा है। रचनात्मक कार्यकर्ताओं के एवं भूदान-कार्यकर्ताओं के संबंध सुधरे हैं।

आन्दोलन के आकार के बारे में जो समाचार मिले हैं, उन पर से ऐसा दीखता है कि कुछ स्थानों में, जैसे गुजरात, महाराष्ट्र, विदर्भ, इलाहाबाद जिला, छिंदवाड़ा जिला और नरसिंगपुर जिला इत्यादि जगहों पर आन्दोलन बढ़ा है। अन्य कुछ प्रदेशों में आन्दोलन घटा है। कुल मिला कर आकार की दृष्टि से जो चित्र बनता है, वह बहुत उत्साहप्रद नहीं है। इसका क्या कारण है? आगामी निवेदकों एवं प्रमुख कार्यकर्ताओं के शिविर में हम शान्ति से इस पर सोचें।

आन्दोलन जहाँ बढ़ा है, वहाँ ऐसा क्यों हुआ है, इसका हम विश्लेषण करें। मुझे विदर्भ के आठ जिलों का एवं इलाहाबाद जिले का अनुभव है। विदर्भ के आठ जिलों में से भी कई जिलों में आन्दोलन कम बढ़ा है, तो अन्य जिलों में अधिक। जहाँ निवेदक एवं प्रमुख कार्यकर्ता जनता के जाने-माने हुए सेवक हैं, वहाँ यह अधिक बढ़ा है। जनता के जैसा ही जिनका जीवनमान, शिक्षा, रहनसहन, बोली आदि है, ऐसे प्रमुख कार्यकर्ता जहाँ मिले हैं, वहाँ आन्दोलन खासा फला-फूला है। उदाहरण के बतौर विदर्भ में अकोला जिले को हम लें। वहाँ के निवेदक एवं प्रमुख कार्यकर्ता जनता के माने हुए लोग हैं। १९५६ के अन्त तक वहाँ के निवेदक एवं प्रमुख कार्यकर्ता प्रजा-समाजवादी दल में थे और बीच-बीच में भूदान-यज्ञ में हिस्सा लेते थे। इधर पलनी में निधि-मुक्ति एवं तन्त्र-मुक्ति की बात चल रही थी, ठीक उसी तारीख को ये मित्र "सत्तावन् तक घर छोड़ कर आने को कौन तैयार हैं", इसकी सूची बना रहे थे। यह संख्या देखते-देखते तीन माह में सौ तक पहुँच गयी। कुछ गले भी! कुछ भाइयों में मानसिक थकान भी आयी। लेकिन ऐसा तो हर आन्दोलन में होता ही आया है। आश्चर्य यह है कि ऐसी परिस्थिति में भी सौ में से पचास-साठ भाई अभी तक मैदान में डटे हुए हैं। इन सब लोगों ने निर्वेतन काम करने का सोचा। यानी न निधि से, न संपत्तिदान से; कहीं से कुछ नहीं लेना। इसलिए 'प्रमुख' एवं छोटे कार्यकर्ता ऐसा कोई भेद नहीं पड़ा। असुविधाएँ सबने बाँट लीं।

विदर्भ में ऐसे भी जिले हैं, जहाँ निवेदक एवं प्रमुख कार्यकर्ता जनता में से ही आये हैं। लेकिन चंद जगहों पर प्रमुख कार्यकर्ताओं ने कार्यकर्ता बढ़ाने पर उतना जोर नहीं दिया। बड़े-बड़े समारोहों आदि पर ही अधिक जोर रहा। परिणामस्वरूप वहाँ आन्दोलन तो बढ़ा, लेकिन अधिक नहीं। गहरा भी नहीं हो पाया। कालड़ी-सम्मेलन तक विदर्भ में कुल तीन ग्रामदान मिले, पर अकोला या वर्धा जिले में एक भी ग्रामदान नहीं मिला था! पर कार्यकर्ताओं में उत्साह भरा हुआ था। पूर्व-तैयारी भी कर चुके थे। कालड़ी से आते ही दो-तीन सौ कार्यकर्ताओं ने ग्रामदान-प्राप्ति पर जोर लगाया। तीन माह में ३५ ग्रामदान मिले। कार्यकर्ताओं की संख्या-वृद्धि पर एवं उनके गुणःविकास पर जहाँ जितना जोर दिया गया, उतना आंदोलन बढ़ा।

लेकिन सब स्थानों पर जनता जिन्हें अपना मानती है, ऐसे कार्यकर्ता हम नहीं ढूँढ़ पाये हैं। अतः जनता जिन्हें अपने से भिन्न मानती है, ऐसे लोगों को कहीं-कहीं निवेदक का काम सौंपना पड़ा है। जैसे, वर्धा जिले में कार्यकर्ताओं ने अपनी शक्ति जनता के माने हुए आदमी खोजने में शुरू में लगायी। ग्रामदान की प्राप्ति का विशेष प्रयत्न न करते हुए सामान्य जनता में से सेवक ढूँढ़ने का प्रयत्न ही हम कर रहे थे। जब दो-तीन माह में ऐसे लोग वर्धा जिले के हर तालुके में मिले, तब उन्हीं पर आंदोलन का संयोजन, कार्यकर्ता ढूँढ़ना, ग्रामदान-प्राप्ति आदि का सारा भार सौंप दिया गया और उनकी मदद के लिए प्रमुख कार्यकर्ता रहे। वर्धा में पचहत्तर कार्यकर्ता साल भर के लिए निकले, जिनमें से पचास आज भी रणक्षेत्र में हैं। आन्दोलन गहराई में जा रहा है। यहाँ तन्त्र-मुक्ति का अक्षर एवं भाव, दोनों का पालन करने की कोशिश हो रही है।

यह हुई तन्त्र-मुक्ति की बात। निधि-मुक्ति के सिलसिले में विदर्भ के कुछ तहसीलों ने १९५५-५६ से ही गांधी-निधि से पैसा लेना छोड़ दिया था। संपत्तिदान से वेतन आदि का खर्च चलता था। सत्तावन् में पूरे विदर्भ ने ही कार्यकर्ताओं का निर्वाहव्यय संपत्तिदान में से लेने की बात छोड़ देने की हिम्मत की। कार्यकर्ता स्वयं आगे आये और उन्होंने अपना यह संकल्प जाहिर किया। छप्पन तक वर्धा जिले के ९ पूरा समय देने वाले कार्यकर्ताओं में से ५ कार्यकर्ता संपत्तिदान में से निर्वाहव्यय लेते थे। सत्तावन में उन्होंने वह भी छोड़ दिया। ऐसा यदि न हो पाता, तो न इतने कार्यकर्ता मिलते, न आंदोलन इतना बढ़ता। अठावन में कुछ व्यवस्था तो करनी होगी, पर तब भी सुविधाएँ एवं असुविधाएँ समान रूप से ही बाँटी जावेंगी। अठावन में भी ये अनेक लोग मैदान में डटे रहेंगे, ऐसा विश्वास है। ऐसा ही इलाहाबाद में हुआ है। हर हालत में प्रमुख कार्यकर्ता एवं अन्यों में वेतन का एवं अन्य सुविधाओं का भेद नहीं होना चाहिए और भेद हो, तो ऐसा कि निवेदक कुछ न ले और सब सुविधाएँ अन्यों को दे! ऐसा विदर्भ में सन् छप्पन तक कहीं-कहीं होता था। जहाँ निवेदक अपने घर से या मित्रों से सुविधाएँ लेता है और अन्य ऐसा कर नहीं पाते हैं, वहाँ आन्दोलन में काम करने वाले कार्यकर्ता एकरस नहीं हुए हैं। परिणामस्वरूप ऐसे स्थानों में आन्दोलन कम बढ़ा है। इन सब बातों के बारे में एक ही अपवाद हो सकता है कि जहाँ का प्रमुख कार्यकर्ता Out standing (विशिष्ट) शक्ति का हो, सिर्फ वहाँ उसकी सुख-सुविधाएँ कार्यकर्ता सहन कर लेंगे।

और एक बात इसीमें से निकलती है। यदि सुविधाओं में फर्क न करना हो, तो बीमारी, प्रवासव्यय आदि के लिए कार्यकर्ताओं को जो खर्च लगता है, उसकी व्यवस्था प्रमुख कार्यकर्ताओं को पहले ही कर रखनी चाहिए। जहाँ निवेदक ने पहले ही कुछ व्यवस्था कर रखी है, वहाँ आंदोलन बढ़ा है। जहाँ इस बात की ओर यथेष्ट ख्याल नहीं दिया गया है, वहाँ प्रारंभिक उत्साह में आये हुए कार्यकर्ता अधिक नहीं टिक पाये हैं। निवेदक खुद बीमार पड़ने पर अपनी तो व्यवस्था कर ले, पर अन्य साथियों के बीमार पड़ने पर उसे जनता पर छोड़ दे, तो इससे कार्यकर्ता घटेंगे। यह समता का आंदोलन है, अतः कार्यकर्ता विषमता को सहन नहीं कर सकते हैं। ये सुविधाएँ प्राप्त करने की सबकी शक्ति भी एक-सी नहीं होती है। अतः शक्तिशाली कार्यकर्ताओं को दूसरे कार्यकर्ताओं के लिए प्रवास, भोजन, बीमारी आदि के लिए संपत्तिदान, सूत्रदान, सूतांजलि द्वारा या रचनात्मक संस्थाओं द्वारा सुविधाएँ करवा देनी चाहिए। जहाँ निवेदक अपने बल पर यह नहीं कर सकता है, वहाँ सर्व-सेवा-संघ के प्रमुख लोग ऐसे जिलों में जाकर ऐसी परिस्थिति पैदा करने में मदद करें। इसके लिए कार्यकर्ता भिन्न-भिन्न प्रदेश आपस में बाँट लें, तो अच्छा होगा। तंत्रमुक्ति एवं निधिमुक्ति का अर्थ गड़बड़ या अव्यवस्था नहीं है। जो कमजोर है, उसे कमजोर ही रहने दिया जाय, यह भी इसका अर्थ नहीं हो सकता। मदद देने में हम स्थानीय प्रेरणा भी कम न करें।

नयी कार्यकर्ता कहाँ से मिलेंगे? हमारी दृष्टि फौरन विद्यार्थी, शहरों के कार्यकर्ता, राजनीतिक पार्टियों के कार्यकर्ता इन्हींकी ओर प्रथम जाती है, जो स्वाभाविक है। कार्यकर्ता शिक्षित एवं पूर्ण निष्ठावान् हों, यह हमारा आग्रह रहता है। अतः एक सीमित सर्कल में हम कार्यकर्ताओं को ढूँढ़ते हैं और अपने आपको कैद कर लेते हैं। इससे अक्सर निराशा होती है। काफी अनुभव के बाद हमने यह दृष्टि बदली। शहरों में से और शिक्षितों में से हमें कार्यकर्ता मिले हैं, लेकिन बहुत कम। देहातों से एवं कम पढ़े-लिखे लोगों में से हमें बहुत कार्यकर्ता मिले हैं। कार्यकर्ता के भूदान-यज्ञ में आने के पूर्व, हमने उसकी एक ही कसौटी मानो कि कार्यकर्ता को इस काम की रुचि है या नहीं? यदि उसे आज रुचि है, तो रुचि में से निष्ठा पैदा होगी। वह अध्ययन करेगा, सुनेगा, देखेगा। परिणामस्वरूप आज नहीं, तो कल विषय लोगों को समझा सकेगा। आज मिल के कपड़े पहनता हो या बीड़ी पीता हो, तो कल उसे छोड़ देगा। इस विश्वास के साथ जो भी आने को राजी था, उसे हमने फौज में भरती किया। धीरे-धीरे उनकी सुप्त शक्ति जाग्रत हुई। चार माह बाद पीपरी (वर्धा) के जीवन-शिविर में कइयों ने खुद-ब-खुद अपना परिचय देते समय कहा कि हमने 'बीड़ी छोड़ी,' 'खादी पहनना शुरू किया,' आदि। शहरों से कार्यकर्ता प्राप्त करने में कठिनाई होती है, क्योंकि सादे जीवन से दूर, जीवनमान आदि के तरह-तरह के नये वहमों में फँसे हुए शहर के लोग रहते हैं। देहातों में यह दिक्कत कम है। पर माँ की भाँति सम्हालने की हमारी वृत्ति भी होनी चाहिए।

www.vinoba.in

कार्यकर्ता कैसे बढ़ाये जायँ ? आत्मविश्वास से यदि जनता से माँग की जाय, तो कुछ न कुछ उसका परिणाम जरूर निकलता है। लेकिन कार्यकर्ता मिलेंगे या नहीं, ऐसी दुविधा में रहते हुए हम मांग करें, तो फिर सब गुड़-गोबर हो जायेगा ! आत्मविश्वास का परस वातावरण को होना चाहिए, उत्साह की लहर दौड़नी चाहिए। उसके साथ-साथ सातत्य होना चाहिए। निरंतर आत्मपरीक्षण करना चाहिए। ये सब गुण भूदान-प्राप्ति के लिए आवश्यक थे। ये ही गुण ग्रामदान एवं कार्यकर्ता जुटाने के लिए आवश्यक हैं। बल्कि भूदान-प्राप्ति से अधिक आवश्यकता अब ग्रामदान एवं कार्यकर्ता-प्राप्ति में इन गुणों की है। आरोहण के इस नये पर्व में इन गुणों के साथ-साथ ऊपर जिक्र किये हुए जनता के आदमियों के खोजने की तीव्र आवश्यकता है। भूदान तो बाहर के लोगों को भी कई बार मिल जाता था। लेकिन कार्यकर्ता-प्राप्ति एवं ग्रामदान जनता के आदमियों द्वारा ही मिलेंगे। हमारे काम की पद्धति जन-आधारित होनी चाहिए। मान लीजिये कि वितरण करना है, तो अब नियम ही बन जाना चाहिए कि वितरण हम नहीं करेंगे, जनता करेगी। इस पद्धति से नये-नये कार्यकर्ता प्रकाश में आवेंगे। हमारा कार्य, कार्यकर्ताओं को ढूँढ़ने का है। फिर ये कार्यकर्ता ही अन्यों को ढूँढ़ेंगे, ग्रामदान लावेंगे एवं ग्रामराज्य बनावेंगे। यह हमारा दृढ़ विश्वास होना चाहिए। आखिर एक निवेदक या एक-दो प्रमुख कार्यकर्ता जिले भर में कर ही क्या सकते हैं ! हमारा रोल तो सहायक का है, प्रमुख काम अन्यों को ही करना है, यह भावना जगनी चाहिए। अतः विनोबाजी ने वर्ष के आरंभ में सत्तावन् के संदेश के रूप में ठीक ही कहा था कि "अहंकार-मुक्ति, वासना-मुक्ति तक भी यदि हम साल भर में पहुँच सके, तो हमारा बड़ा काम सिद्ध होने वाला है। सेवकों की शुद्धि यानी कार्य की सिद्धि, यह सूत्र सदा चिन्तन में रहने दो।"

उत्तर बुनियादी शिक्षा और ग्रामदान-विद्यालय

(देवी प्रसाद, हिं० तालीमी संघ)

नई तालीम के कार्यकर्ताओं के सामने यह बात अब बिलकुल स्पष्ट हो गयी है कि तालीम का भावी कार्यक्रम ग्रामदान-आन्दोलन के आधार पर ही बनाना होगा। आज नई तालीम को दो दृष्टियों से ग्रामदान-आन्दोलन से मिलना है : एक तो यह कि उसके बिना वह असलियत से परे रह जायगी और दूसरी बात है; विनोबा का कन्याकुमारी वाला संकल्प। आज वह एक व्यक्ति का ही संकल्प नहीं, बल्कि पूरे राष्ट्र की मांग है। उन्होंने तो स्वयं इसे विश्व-संकल्प कहा है। इस काम के लिए लोक-सेवक तैयार करना तालीम का ही काम है।

मेरी मान्यता है कि यह काम उत्तर बुनियादी स्तर के विद्यालय शुरू करने से हो सकता है। इन विद्यालयों का स्वरूप ग्राम-संकल्प और ग्रामदान के कार्यक्रम के आधार पर तैयार होना चाहिये। यानी इन ग्रामदान-विद्यालयों के शिक्षक और विद्यार्थी अपनी शिक्षा का मुख्य केन्द्र ग्रामदान की प्रवृत्ति बनायेंगे।

आम तौर पर उत्तर बुनियादी विद्यालय की योजना बनाते समय काफी साधन-सरंजाम संग्रह करने की और खेती-बागवानी के लिए जमीन की बात आती है। किन्तु जिस तरह के उत्तर बुनियादी विद्यालय का सुझाव मैं यहाँ रख रहा हूँ, उसके लिए साधनादि बहुत कम लगेंगे। उसमें स्वावलंबन होगा, किन्तु स्वावलंबन के लिए जो साधन चाहिये, वे अधिक से अधिक गाँव के ही होंगे। खेती के मौसम में विद्यार्थी गाँव की जमीन पर मजदूरों की तरह काम करें। दूसरा उद्योग वस्त्रविद्या का होना शायद सबसे व्यावहारिक होगा। अम्बर चरखे के द्वारा पूरा-पूरा स्वावलम्बन हो सकेगा। साथ-साथ करघे का भी काम चलेगा। तीसरा काम गाँव में कम्पोस्ट खाद बनाने का होना चाहिये। सड़कों पर गोबर और पाखाना अत्यधिक मात्रा में पड़ा रहता है। जिस गाँव में विद्यालय होगा, उस गाँव की सफाई की समस्या के हल के साथ-साथ खाद मिलेगी। फिलहाल ये तीन उद्योग काफी हैं। स्थान-विशेष की दृष्टि से छोटी-छोटी दस्तकारियाँ थोड़ी की जा सकती हैं।

उत्तर बुनियादी ग्रामदान-विद्यालय की इस योजना में उद्योग के चुनाव के पीछे एक खास दृष्टि है। अगर जगह-जगह ऐसे विद्यालय शुरू करते हैं, तो पूँजी का सवाल आयगा। इसलिए योजना अब ऐसी होनी चाहिए, जिसमें आधार पूँजी पर न हो। दूसरी बात अधिक महत्त्वपूर्ण है। वह कुछ नयी-सी है, किन्तु विचारणीय है। विद्यालयों के पास अगर खूब जमीन और बड़ी-बड़ी कर्मशालाएँ (वर्कशॉप) होंगी, तो उनके छात्रों को उन्हींमें काम करने, उनकी देखभाल करने से फुरसत नहीं मिल सकती। वे अपने आसपास की और गाँव की समस्याओं पर अधिक ध्यान नहीं दे पायेंगे। इसलिए इसे सिद्धान्त के तौर पर यहाँ रख रहा हूँ— **शिक्षा के साधन ऐसे हों, जिनसे शिक्षार्थी बन्ध न जायें; और जो उन्हें किसी स्थान-विशेष से भी न बाँधें। साधन के हाथ में हमारा कार्यक्रम न हो, बल्कि साधन हमारे अधिकार में हों।** यहाँ मुझे विनोबाजी का एक वाक्य याद आता है : "हर साधन मुक्ति के लिए है, बन्धन के लिए नहीं।"

विद्यालय का संगठन : ये विद्यालय जिलेवार होने चाहिये। विद्यालय के लिए ऐसा गाँव चुनना चाहिये, जो जिले के करीब बीच में हो, जिससे पदयात्राओं की योजना बनाने में सुविधा हो। गाँव इतना ही बड़ा हो कि जिससे विद्यालय का सम्बन्ध हर घर की रोजाना की जिन्दगी से आ सके। इस हिसाब से गाँव सौ घरों से अधिक का किसी हालत में नहीं होना चाहिये। अगर ऐसी परिस्थिति का गाँव ग्रामदानी हो, तो वह सबसे अच्छी बात होगी।

उत्तर बुनियादी शिक्षाक्रम आम तौर पर तीन साल का होता है। इसलिए ग्रामदान-विद्यालय में तीन टोलियाँ होंगी। प्रत्येक टोली में औसत दस विद्यार्थियों से अधिक नहीं होने चाहिये। हर टोली के एक गुरुजी होंगे। पहली टोली साल भर विद्यालय में स्थायी रूप से रहेगी। इन विद्यार्थियों का कार्यक्रम अपने को ग्रामदान के काम के लिए तैयार करना होगा। प्रवृत्तियों में, ऊपर कही गयी तीन प्रवृत्तियाँ मुख्य रहेंगी। गाँव के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में हिस्सा लेकर वहाँ का वातावरण सुधारने का प्रयत्न और अपने जीवन से उस गाँव को ग्रामदान के लिए तैयार करना, इनके शिक्षाक्रम का अंग होगा। साथ-साथ नई तालीम के सिद्धान्त के अनुसार उनकी स्वाध्याय-साधना चलती रहेगी। गाँव की सफाई और कम्पोस्ट का कार्यक्रम ही विद्यालय का सफाई और कम्पोस्ट का कार्यक्रम होगा। गाँव में वैज्ञानिक तरीके से पाखाने, पेशाब-घर बनें, गाँव में पीने के लिए शुद्ध पानी मिले, गाँव का भोजन कैसे समतोल हो और यह सब करने से बीमारियों से बचाव किस तरह से होता है, यह सब उनकी शिक्षा का अंग होगा। दूसरी टोली के विद्यार्थी माह में तीन हफ्ते पदयात्राएँ करेंगे। इनकी पदयात्राएँ ग्रामदान के लिए वातावरण निर्माण करने और ग्रामदान-प्राप्ति के लिए होंगी। माह में एक सप्ताह विद्यालय में आकर बितायेंगे। वह समय चिन्तन और काम की चर्चाओं का होगा।

तीसरी टोली का मुख्य काम ग्राम-संकल्प और ग्राम-निर्माण का काम होना चाहिये। निर्माण-काम की यह टोली भी यात्रा-टोली होगी, जो जरूरत के मुताबिक ग्रामदानी गाँवों में समय देगी। इनका कार्यक्रम परिस्थिति के अनुसार इकट्ठा या अलग-अलग बँट कर, एक-एक गाँव में अधिक समय के लिए हो सकता है। ऐसी हालत में टोली के आचार्य विद्यार्थियों की सहायता के लिए एक गाँव से दूसरे गाँव का दौरा करते रहेंगे। यह टोली भी तीन हफ्ते बाहर और एक हफ्ता विद्यालय में, दूसरी टोली की तरह बितायेगी। विद्यालय कभी-कभी शिविर इत्यादि का आयोजन करेगा, जिसमें दूसरे कार्यकर्ता भी आ सकते हैं। इस तरह के शिविर विद्यालयवाले गाँव में ही हों, यह जरूरी नहीं है। इसके लिए जिले के दूसरे गाँव भी चुने जा सकते हैं। इससे वातावरण बनता है।

यह विद्यालय सारे जिले का ग्रामदान का काम उठा लेगा। भूदान के अन्य कार्यकर्ता भी उसके साथ युक्त हो सकते हैं। उसके द्वारा ग्रामदान-आन्दोलन में नई तालीम का प्रवेश होगा और आन्दोलन की शक्ति बढ़ेगी। इस विद्यालय के लिए कोई विशेष पूर्वतैयारी करने की जरूरत नहीं पड़ेगी। गाँव ऐसा चुना जा सकता है, जिसमें बीस-तीस लोगों के रहने के लिए एक आध कोठा मिल सकें या फिर एक मामूली शेड बनाना होगा। छह-आठ अम्बर चरखे के सेट, सबके लिए एक-एक प्रवास-चक्र, कुछ हँसिये, फावड़े, खुर्पी, इत्यादि चाहिये।

हमारे जिला-निवेदकों में से ऐसे काफी मित्र होंगे, जो इस तरह के विद्यालय चला सकते हैं। जिले में ३० विद्यार्थी ठीक वृत्ति वाले थोड़ा खोज करने पर मिलना मुश्किल नहीं होगा। फिलहाल तो हमें इस पर आपत्ति नहीं होनी चाहिए—अगर नये विद्यार्थी गैर-बुनियादि शालाओं से निकले हुए हों। हाँ, उनके शरीर, मन और बुद्धि की तैयारी होनी चाहिए। आज विद्यार्थी ऐसा मानते हैं कि इस आन्दोलन में पड़ने से उनकी शिक्षा का नुकसान होगा। किन्तु उन्हें अगर यह विश्वास हो कि यह शिक्षा की ही योजना है और वे तीन-चार साल इस शिक्षाक्रम को ठीक तरह पूरा करने पर उत्तर बुनियादी शिक्षा के स्नातक बन जायेंगे, तो हमें विश्वास है कि योग्य विद्यार्थी मिलना कठिन नहीं होगा। यह योजना एक सुझाव के तौर पर आप सबके सामने नम्रतापूर्वक रखी है।

---

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ
२० सितंबर सन् १९५७

लोकनागरी लिपि *

हम सारे अेक ही समाज के अवयव हैं !

(वीनोबा)

चतुर्भुज वीष्णु भगवान् कहां प्रगट होते हैं ? जहां दो हाथों के साथ दूसरे दो हाथ मील जाते हैं। याने अनेक मनुष्य प्रेमपूर्वक कोअी कार्य करते हैं, वहां नारायण की कृपा प्रगट होती हैं।

अीस भरत-भूमी ने दुनीया के कअी समाजों को आश्रय दीया है। 'भारत भूमी' का अर्थ ही है, सबका भरण-पोषण करने वाली। अीसलीअे दुनीया के लोग कअी हज़ार वर्षों से यहां आकर बसे हैं। फीर भी यह अेक अखंड राष्ट्र बना। प्राचीन काल से अनुभवी ॠषी-मुनीयों ने सुंदर वीचार सारे देश में घूम-घूम कर फैलाये। देश के अीस कोने से अुस कोने तक भावनाओं का परस्पर-स्पर्श कराया। अुसके परीणाम-स्वरूप भारत अेक बना और अुसीके कारण भारत की जन-संख्या ३६ करोड़ है। बहुत बड़ी जन-संख्या का यह देश है। कल अगर योरप के लोग अेक हो जायेंगे, तो वे भी ५० करोड़ होंगे। परंतु आज वे अेक नहीं हैं। वे छोटे-छोटे अलग-अलग देश बने हैं। अीसीलीअे हम कहते हैं की भारत सामाजीक और राजनैतीक दृष्टी से योरप से आगे बढ़ा हुआ है। यह बात बहुत से लोग समझते नहीं। वे लोग वीज्ञान में ज़रूर हमसे आगे हैं, परंतु जीवन-शास्त्र, समाज-शास्त्र, राजनैतीक शास्त्र, अीनमें वे पीछड़े ही हैं। अगर यह बात हम समझेंगे, तो हमारी जीम्मेवारी का भान भी हमको होगा। जीम्मेवारी है, समाज को अेकत्र करने की। प्रेम से अेक-दूसरे के साथ जुड़ जाना है, हमारा जीवन अभेद-तत्व पर खड़ा करना है। भेद तो सृष्टी में पड़ा ही है। पशु-पक्षी मानव से अलग हैं, मानव से वृक्ष अलग हैं, वृक्ष में भी शाखाअें अलग-अलग होती हैं। अेक ही शाखा के पत्तों में भी समानता नहीं होती। अीसलीअे अैसे भेदों पर यदी हम जोर देंगे, तो भारत की शक्ती कम होगी। अगर भेदों ही पर जोर देना है, तो छोटे-छोटे राष्ट्र बनाने होंगे। पहले वे टीक सकते थे। परंतु आज वे टीक भी नहीं सकते, क्योंकी वे कमजोर रह जाते हैं। अीस वास्ते अगर बड़े राष्ट्र के रूप में हमें अपनी ताकत बढ़ानी है, तो हमें दील भी बड़ा करना होगा। 'यह मेरी जाती, मेरा धर्म, मेरा गांव, मेरा घर', अीस तरह हमें नहीं सोचना चाहीअे। हम सारे अेक समाज के अवयव हैं, अीसी तरह हमें सोचना चाहीअे।

(मधे, कूर्ग, ६-९-'५७)

* लिपि-संकेत : ि = ी; ी = ी, ख = ख, संयुक्ताक्षर हलंत-चिह्न से।

कालपुरुष का महान् दर्शन !

(शिवाजीराव भावे)

महाराष्ट्र-संत समर्थ रामदास स्वामी के जीवन की एक प्रमुख घटना है। जिस समय उनका विवाह होने जा रहा था, उस समय मंगलाष्टकों के तौर पर जब "शुभ मंगल सावधान" कहा गया, तो "सावधान" शब्द से पूरे ही 'सावधान' होकर वे विवाह-वेदी से उठ कर भाग गये ! फिर नाशिक के पास बारह साल तक उन्होंने तपस्या और ज्ञान-साधना की। बाद में बारह साल तक वे सारे हिंदुस्तान भर घूमे एवं 'समर्थ रामदास' बन गये। उनकी माताजी इस बीच अंधी हो गयी थीं। कहा जाता है कि रामदास स्वामी ने उनकी आँखों पर से हाथ फेरा, तो उन्होंने अपने बेटे 'नारायण' को 'समर्थ रामदास' के रूप में पाकर उसका नव रूप-दर्शन समझ लिया।

माँ की बंद आँख खुल जाने की यह घटना सच हो या गलत, लेकिन "मेरा पुत्र पूर्णतः परिवर्तित हो गया है," इतना भान तो माता को हो ही गया ! मातृ-ममता के कारण अक्सर यह संभव नहीं होता है, परंतु समर्थ के समान पुत्र के कारण उस माँ को यह परिवर्तन स्पष्ट रूप से दीख गया।

× × ×

बारह साल पहले मैंने यह नदी देखी थी। आज भी ठीक वैसी ही लगती है। लेकिन वास्तव में यह तो क्षण-क्षण बदलती ही रही है। तथापि कालपुरुष का यही परिवर्तन पुरानी आँखों को सहसा नहीं दीख पड़ता है। नवयुग के अवतार का उन्हें भान नहीं होता है। पुरानी कल्पनाएँ यह परिवर्तन देखने में असमर्थ साबित होती हैं। यही वास्तविक अंधता है। 'नीरांजन' जल रहा है। प्रतिक्षण बत्ती और तेल का व्यय हो रहा है, फिर भी दीये की लौ वैसी ही दीखती है। 'सोऽयं दीपः, सोऽयं दीपः,' ऐसा कितना भी कहा जाय, तो भी कालप्रवाह में दीया जैसे के तैसे कैसे रहेगा? वह तो प्रत्येक क्षण बदलेगा। लेकिन यह परिवर्तन पुरानी आँखों को नहीं दीखता। यही भ्रम अंधता है। नीरांजन भगवान् के सामने जो जलाया जाता है, वह इसीलिए कि परिवर्तन लक्षित हो, क्योंकि अभिषेक-पात्र का एक-एक बिंदु भगवान् के मस्तक पर गिर-गिर कर समय के बीतने का ही तो भान कराता है !

रामकृष्ण परमहंस का ब्याह बचपन में ही हो गया था। लेकिन भक्ति और समाधि की तल्लीन अवस्था में दुनिया की बहुत-सी बातों के साथ-साथ अपने विवाह की बात भी वे एकदम भूल गये। लोग उन्हें 'पागल' कहने लगे। पत्नी ने यह हालत सुनी। वे स्वयं देखने के लिए आयीं, पर रामकृष्ण ने उन्हें नहीं पहचाना। उनसे कहा, "अरे, जिस रामकृष्ण से तुम्हारा विवाह हुआ था, वह तो कबका मर चुका ! यह तो बिलकुल नया रामकृष्ण है !" श्रद्धावान् पत्नी ने भी कालावतार को समझ लिया; वे दुःखी नहीं हुईं।

× × ×

भगवान् बुद्ध राज्य तज कर सात साल वन में रहे। ज्ञान-प्राप्ति हुई। भूमिका सर्वथा बदल गयी। शिष्यों-सहित राजधानी में वापस आये। राजमहल के सामने उपस्थित हुए। हाथ में भिक्षा-पात्र था। पुत्र को साथ लेकर यशोधरा मिलने आयी। इस प्रसंग का एक चित्र अजंता की गुफा में है। चित्रकार ने भगवान् बुद्ध को आकाश को छूते हुए, विशाल और भव्य बताया एवं यशोधरा को गुड़िया की-सी छोटी-नाटी बना दिया ! इस पर पश्चिमी चित्रकारों ने आलोचना की कि "परस्पर प्रमाण-बद्धता ही इस चित्र में नहीं है !" पर भले आदमियों के ध्यान में यह नहीं आया कि इन सात सालों में गौतम की दुनिया ही जो पलट गयी थी ! वही विलक्षण विकास तो यशोधरा के दिव्य चक्षु देख रहे थे ! उसीका वह विशाल अंतर-दर्शन चित्रकार ने चित्रित किया है। दरअसल चित्रकार की कल्पना का तो कौतुक ही करना चाहिए। यशोधरा ने तो भगवान् का कालावतार चीन्ह लिया था !

कालपुरुष सतत बदलते रहता है, यह सब जानते हैं। लेकिन उस 'परिवर्तित महानता' का दर्शन बहुत कम लोगों को हो पाता है। आज भी परिवर्तित महान् कालपुरुष सामने उपस्थित है। आवश्यकता उसे पहचानने भर की है।

यह परिवर्तित महान् कालपुरुष कौनसा है ? भूदान-यज्ञ : उसमें से उद्भूत यज्ञमाला और ग्रामदान !

(मूल मराठी)

www.vinoba.in

स्वार्थ ही एक पाप है, क्षुद्रता ही एक दुर्गुण है और द्वेष ही एकमात्र अपराध है। दूसरी सब बातों का परिवर्तन अच्छे रूप में किया जा सकता है। लेकिन ये तीनों दिव्य शक्ति के दुर्निवार विरोधक हैं।....

—श्री अरविंद

* * *

पराक्रमी और वीर्यवान कैसे हो सकेंगे?

(विनोबा)

सवाल पूछा गया है कि क्या वानप्रस्थ और संन्यास, ये हमारे नये राष्ट्र के लिए ठीक हैं? हमारा देश पुराना है, परन्तु राष्ट्र नया है। हमको तो शूर, श्रीमान्, हिम्मतवान, बहादुर लोग चाहिए। अनासक्त, मृदु, दारिद्र्य लोग नहीं चाहिए।

बहुत दुःख की बात है कि अपने यहीं के सर्वोत्तम शब्द की पहचान अपने यहाँ के लोगों को नहीं है। अगर संन्यास याने 'दरिद्रय' होता, तो पूरा हिंदुस्तान संन्यासी है, ऐसा कहा जाता! यह ध्यान में रखिये कि जब इन्द्रियों पर संयम रखोगे, तभी बहादुर और हिम्मतवाले बनोगे। विषयासक्त रहोगे, तो मृदु बनोगे, फिर आपसे पुरुषार्थ नहीं बनेगा। संन्यास का अर्थ निर्वीर्यता नहीं है। संन्यास याने वीर्यता है। गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी इन्द्रियों पर अंकुश रखना चाहिए। कुछ समय गृहस्थ-जीवन बिताने के बाद सब वासनाओं से मुक्त हुए बिना महापुरुष पैदा नहीं होंगे। इस विषय पर आपको ठीक चिंतन करना होगा। उसके लिए आपको महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, अरविन्द घोष, स्वामी विवेकानन्द आदि के चरित्र पढ़ने चाहिए! उससे आपके ध्यान में आयेगा कि जिन्होंने अपने पर अंकुश रखने की कोशिश की थी, वे ही राष्ट्रनेता बने।

पंडित जवाहरलाल नेहरू संन्यासी नहीं हैं, तो क्या हैं? कभी उनको भोगवासना में आपने देखा है? १६-१६ घंटे काम करते हैं, कभी बीमार पड़े, यह सुना ही नहीं, निरंतर सेवा में लगे हैं। देश में और परदेश में भी घूमते रहते हैं। वे तो एक वानप्रस्थ हैं। उनके जैसा दूसरा वानप्रस्थ हमने नहीं देखा।

वानप्रस्थ याने कौन? जो घूमता रहता है, क्या वही वानप्रस्थ है? वानप्रस्थ तो वह है, जो अपने पर अंकुश रखता है और जिसने अपने गृहस्थाश्रम का संक्षेप करके सामाजिक गृहस्थाश्रम उठाया है। वह विषय-वासना से मुक्त होगा। लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू इसी प्रकार के वानप्रस्थ रहे हैं। अगर वे विषयासक्त गृहस्थ होते, तो उनसे पुरुषार्थ नहीं बनता।

हम यह नहीं चाहते कि देश बलहीन और दरिद्री बने। संन्यास की दीक्षा अगर किसीने दी है, तो वह उपनिषदों ने दी है। उन्होंने कहा: 'बलं वाव विज्ञानाद् भूयः' विज्ञान से बल श्रेष्ठ है, 'नायं आत्मा बलहीनेन लभ्यो,' बलहीन को आत्मा नहीं मिलता। यह क्या दिखाता है? क्या वे दुर्बल, निर्वीर्य प्रजा चाहते हैं? वे बलवान्, तेजस्वी, वीर्यवान् प्रजा ही चाहते हैं और देश भी समृद्ध चाहते हैं, इसीलिए उन्होंने आज्ञा दी है 'अन्नम् बहु कुर्वीत्' अन्न बहुत बढ़ाओ। इतना ही कह कर वे नहीं रहे, तो उन्होंने आगे कहा, "तद् व्रतम्"—वैसा व्रत लो। याने देश श्रीमान्-समृद्ध करने का व्रत लेने की बात उन्होंने कही है।

आज ऐश्वर्य की कल्पना है, जीवनमान बढ़ाने तक; पर जीवनमान तो बढ़ा नहीं, सिगरेट का मान जरूर बढ़ा है!! ४० साल पहले जितना तेल पेट में जाता होगा, उतना आज पेट में नहीं जाता, पर बालों में जरूर जाता है! दूध तो दीखता भी नहीं! इस वास्ते दिलीप राजा गायों की सेवा के लिए जैसा निकला था, वैसे त्यागी लोगों को निकलना चाहिए और देश का दूध बढ़ाना चाहिए। आज हर मनुष्य के पीछे ५ औंस दूध है। आप दूसरी-तीसरी चीजें बढ़ाना चाहते हैं, बढ़ाइये, परंतु वैभव बढ़ाने का भी क्रम होता है। दूध, फल, तरकारी, शहद आदि महत्त्व की चीजें प्रथम बढ़नी चाहिए, फिर थोड़ा कपड़ा भी बढ़े। परंतु कपड़ा अगर ज्यादा बढ़ेगा, तो हवा का स्टैंडर्ड घटेगा! खुली हवा में सो सकें, इतना कपड़ा सबको होना चाहिए। व्यसन की चीजें नहीं होनी चाहिए, रात को पूरी नींद लेनी चाहिए, सुबह जल्दी उठना चाहिए। सुबह कल्पना-शक्ति ज्यादा चलती है, इसलिए उस वक्त अध्ययन करना चाहिए, व्यायाम करना चाहिए, योगाभ्यास करना चाहिए, ईश्वर-चिंतन करना चाहिए। यह सब होगा, तभी देश पराक्रमी और वीर्यवान होगा।

(पत्तर, सा० कॅनरा, ३०-८-५७) ——

एक नये जगत् ने जन्म लिया है।

जिनको उसमें स्थान चाहिए, वे सब उसके लिए अपने को हृदयपूर्वक तैयार रखें!

१५-८-'५७ —श्री माताजी

* * *

संस्था-जीवन की साधना के कुछ सामान्य कदम

(धीरेन्द्र मजूमदार)

हृदय-परिवर्तन, जीवन-परिवर्तन आदि की साधना संस्थागत सामूहिक नियम बना कर नहीं हो सकती। ये सब व्यक्तिगत साधना के विषय हैं। साधना के लिए बहुत आगे के कदम के बारे में भी पहले से नहीं सोचना चाहिए। इसके लिए दृष्टि यह होनी चाहिए कि जो जहाँ हैं, वे उससे थोड़ा और आगे बढ़ने की कोशिश करें, जिसको Marginal Approach कहते हैं। कुछ सुझाव प्रस्तुत करता हूँ:

(१) जीवन-परिवर्तन के लिए एक छोटा-सा संकल्प करें। हमने दिन भर के कामकाज के लिए जो कुछ दिनचर्या निश्चित की है, उसे नियम से और समय पर करने का संकल्प लें और रात को चाहे डायरी में लिखें या चाहे याद कर लें कि हम किस-किस मद में चूके। आजकल अधिकांश भाई-बहन सामूहिक भोजनालय को होटल बना चुके हैं। यानी थाली में भोजन परोसवा कर निवास-स्थान पर ले जाते हैं। सांस्कृतिक जीवन की दृष्टि से इसे भी रोकना चाहिये।

(२) कुटुम्ब-भावना के विकास के लिए हम सब यह निर्णय कर लें कि हम अपना दोष और दूसरों का गुण देखें। पाँच-छह आदमी एकसाथ बैठ कर जो चर्चा चले, उसमें चर्चा को निराकार रूप न आये, तो वहाँ उपस्थित न हों। इस बात को हम लोग साधने की कोशिश करें।

(३) हम इस क्रांति के संदर्भ में आरोहण के बजाय अवरोहण करने लगते हैं। इसका कारण यह है कि हम नित्य नया त्याग और तप की साधना नहीं करते हैं। काल हर वस्तु का ग्रास निरन्तर करता रहता है। पिता की मृत्यु पर हमको अत्यन्त शोक होता है। यह शोक भी शनैः-शनैः कालग्रास से ग्रसित हो जाता है। फिर हमारे कमरे में पिता का विशाल चित्र रहने के बावजूद उसी कमरे में नाच-गान आदि विभिन्न विनोद का कार्यक्रम चलता रहता है। उसी तरह हम पाँच हजार रुपया वेतन पाकर आराम से रहने के बजाय सेवा के लिए अगर सौ रुपये मासिक मे गुजारा करके तकलीफ उठाते हैं, तो हमारे उस त्याग से कुछ तेज अवश्य निकलेगा, लेकिन इस तेज को भी काल के ग्रास से मुक्ति नहीं मिल पाती है और क्रमशः वह भी हसित होकर शून्य हो जाता है। इस तरह अवरोहण की प्रक्रिया चलती रहती है। अगर हमें आरोहण करना है, तो हमें निरन्तर नये-नये त्याग और तप से काल की क्षति-पूर्ति के अलावा मूल पूँजी में कुछ वृद्धि करते रहना होगा। इस पर प्रत्येक को अलग-अलग सोचना होगा।

(४) शासन-मुक्ति के लिए गाँव-गाँव में हम शासन को विकेन्द्रित करने की कोशिश करते हैं। यह तो समाज के लिए है। लेकिन संस्थाओं में शासन का विकेन्द्रीकरण न करके उसका विघटन करना है। अतएव हमारी साधना विकेन्द्रीकरण की दिशा में न होकर विलीनीकरण की दिशा में होनी चाहिए, यद्यपि हम शासन को अवांछनीय मानते हैं, तथापि हमारे चरित्र के कारण आज वह आवश्यक है। कोई भी चीज, चाहे जितनी अवांछनीय हो, अगर वह अनावश्यक नहीं है, तो उसका विघटन नहीं हो सकता है। वह अवश्य कायम रहेगी। अतएव शासन-मुक्ति की साधना शासन को अनावश्यक करने के लिए होनी चाहिए। शासन अनावश्यक तभी होगा, जब प्रत्येक मनुष्य हर चीज के लिए अपने खुद को जिम्मेदार समझेगा। अगर उसके लिए किसी विशिष्ट संचालक को मुकर्रर करना पड़े, तो यह नहीं हो सकेगा। इसके लिए भी एक-दो छोटे-छोटे मद ले लेने चाहिए। मिसाल के तौर पर सब लोग यह तय करें कि हमारे अहाते में कागज के टुकड़े कहीं न पड़े रहें। सब लोग यह निर्णय करें कि कोई कागज का टुकड़ा निश्चित स्थान के सिवा न फेकें। अगर किसीने भूल से ऐसा कर भी दिया, तो जो कोई निर्धारित व्यक्ति उसे पहले देखे, वह उसे उठा कर निर्धारित स्थान पर डाल दे। सफाई का काम करने वाले बाकी सब चीजों की सफाई करें, लेकिन वह कागज न उठाये। महीने भर में हम देखें कि सामूहिक जिम्मेदारी में हम कितना आगे बढ़े हैं! इसी तरह पेड़ों में, खम्भों आदि में दीमक लगती है। उसके लिए भी इसी तरह कर सकते हैं। इस तरह हम साधना में एक-एक कदम आगे बढ़ सकते हैं।

(खादीग्राम के साथियों के सामने।) ——

www.vinoba.in

हमारी नागरिक समस्याएँ

(महावीरप्रसाद केड़िया)

"रायपुर की घटना और उसका सबक" शीर्षक लेख में सृजन-शक्ति-उपार्जन के कारगर रास्तों के विषय में थोड़ा स्पष्ट चिंतन करने का आवाहन श्री लक्ष्मीनारायणजी ने किया है। शहरों में रायपुर की घटना जैसे उपद्रव आये दिन होते रहते हैं। इन उपद्रवों का मूल कारण शहरों का स्वार्थमय जीवन, आम जनता के बढ़ते हुए कष्ट, राजनैतिक पक्षों की अक्षमता और जनता के मन में उत्पन्न घोर निराशा है। सर्वोदय में निष्ठा रखने वाले इस परिस्थिति में बहुत कारगर काम कर सकते हैं, परन्तु इसके लिए आवश्यक है कि हम शहरों की समस्याओं को थोड़ा गहराई से समझें तथा शहर की जनता के साथ अपने विचारों का सामंजस्य स्थापित करें।

शहरों में आज जो व्यवस्था है, वह मानव-प्रगति के लिए एक बड़ी बाधा है। वहाँ के गन्दे तथा अंधकारमय वासस्थान, लोगों का अप्राकृतिक जीवन, विभिन्न वर्गों के बीच असाधारण विषमता—इनके रहते हुए उपद्रव न हों, तो यही आश्चर्य है। एक तरफ तो समाजवाद का नारा सभी राजनैतिक पक्ष बुलन्द कर रहे हों और दूसरी ओर आर्थिक विषमता उत्तरोत्तर बढ़ती चली जाय, यह आम जनता की समझ में नहीं आता। गणतंत्र-राज्य में देश का विशाल बहुमत पिसता चला जाय और थोड़े-से मुट्ठी भर उद्योगपति, बड़े अफ्सर, बैरिस्टर, डाक्टर, व्यवसायी आदि लोग ऐश-आराम की जिन्दगी बिता सकें, तो आम जनता हैरत में पड़ जाती है कि आखिर इस देश का कारोबार बहुमत के हित के लिए चलता है या मुट्ठी भर लोगों के लिए! आर्थिक विषमता शहरों में अपने नग्न रूप में प्रदर्शित होती है! बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनती हैं, परन्तु साधारण नागरिक को तो इन योजनाओं के कारण बढ़ती हुई महँगाई का शिकार होने के सिवाय कुछ नहीं मिलता। जनता के इस गम्भीर असंतोष को राजनैतिक पक्ष अपने खिलवाड़ का साधन बना लेते हैं। इन मूलभूत समस्याओं के हल का कोई उपाय जब तक हम सर्वोदय की ओर से नहीं सुझाते, तब तक यहाँ की जनता में हमारे कार्यक्रम के लिए कोई आकर्षण नहीं हो सकता।

शासनमुक्त समाज की विचारधारा के कारण, मुझे ऐसा लगता है कि, हम लोग आज सामान्य नागरिक के जीवन से अलग होते जा रहे हैं। एक आदर्श को हम उतनी ही दूर तक आगे बढ़ा सकते हैं, जितना जनता उसे ग्रहण कर सके। हमारी कल्पना और जनता की मानसिक प्रगति में यदि बहुत बड़ी खाई हो, तो उसे पाटना मुश्किल होता है तथा हम जनता से अलग पड़ जाते हैं। एक ओर हमारा विचार शासन-मुक्ति के आदर्श की ओर बढ़ रहा है, दूसरी ओर शासन जनजीवन को अधिकाधिक जकड़ता जा रहा है। एक निष्पक्ष तथा सच्चे नेतृत्व के अभाव में जनता विभिन्न राजनैतिक पक्षों के पीछे दौड़ती रहती है।

वर्तमान समस्याओं के ऊपर चिंतन करने वाला एक स्वतंत्र वर्ग खड़ा होना चाहिए। देश की जमीन की समस्या प्रधान होते हुए भी अन्य समस्याओं को हम टाल नहीं सकते। समस्याओं का हल हमें सुझाना होगा। हम केवल इतना कहें कि जनता को अपने पुरुषार्थ से काम लेना चाहिए, तो सिद्धान्तः यह ठीक होते हुए भी आम जनता के मन में इससे आशा का संचार नहीं होता। आम जनता न तो संगठित ही है और न अपनी शक्ति महसूस कर रही है। जनता की तो आवाज भी नहीं उठ पाती। सर्वोदय-समाज का यह एक ऐतिहासिक कर्तव्य है कि जनता की आवाज को बुलन्द करने का काम अपने ऊपर उठा लें।

आज चुनाव होते हैं। चुनाव का सही अर्थ जनता का शिक्षण है। परंतु राजनैतिक पक्षों द्वारा तो केवल एक-दूसरे को भला बुरा कहने का कार्य ही हो पाता है। निर्भीक स्वर में पक्षपातरहित आवाज उठाना सर्वोदय-समाज का कर्तव्य है। देश की विभिन्न समस्याओं पर जनमत तैयार करना अत्यावश्यक है। समाचार-पत्रों से भी इन समस्याओं पर गंभीर चिंतन नहीं होता है। कुछ मित्रों को ऐसा लग सकता है कि विशाल कार्यक्रम को हाथ में लेने से शायद हम अपने तात्कालिक कार्यक्रम को पूरा न कर सकें। परंतु मेरा खयाल है कि यह एक आभास मात्र है। जनता की दैनन्दिन समस्याओं को हाथ में लिये बिना हम जनशक्ति खड़ी नहीं कर सकते और न जनता में हमारे काम के प्रति कोई श्रद्धा पैदा होती है। शहरों की अधिकांश—कलकत्ते के लिए तो ९५ प्रतिशत कहें, तो भी अतिशयोक्ति नहीं होगी—जनता हमारे कार्यक्रम में कोई दिलचस्पी नहीं रखती। ऐसी हालत में हम नागरिक जीवन पर कोई असर डाल सकें, ऐसा संभव नहीं दीखता। जनशक्ति को धीरे-धीरे बढ़ाते हुए तो शासनमुक्ति की ओर भी हम ले जा सकते हैं, परंतु आज तो शासन के सर्वग्रासी स्वरूप के सामने जनता हत-बुद्धि हो जाती है। राज्यसत्ता के ऊपर ऋषिसत्ता का अंकुश रखने वाली हमारी बात हवा में ही रह गयी। क्या सत्ताधारी पक्ष और क्या विरोधी पक्ष, दोनों हमको उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। विनोबाजी में श्रद्धा और भक्ति होने कारण हमारे शीर्षस्थ नेता थोड़ी सहानुभूति हमारे काम में रखते हैं, परंतु इससे अधिक हमारा प्रभाव नहीं है।

शहरों में हमारा प्रभाव क्यों नहीं बढ़ रहा है, इसी प्रश्न पर सोचते हुए जो विचार सामने आये, उनको पाठकों के सामने रखता हूँ। अभी कोई ठोस सुझाव तो सामने नहीं हैं, फिर भी थोड़े सुझाव दे रहा हूँ :

(१) विभिन्न स्थानों में सर्वोदय-मण्डलों की स्थापना की जाय, जिनमें विभिन्न समस्याओं पर निष्पक्ष तथा स्वतंत्र चिंतन की प्रवृत्ति को आगे बढ़ाया जाय।

(२) सर्वोदय-मंडल द्वारा तात्कालिक समस्याओं के हल के लिए जनता को नेतृत्व प्रदान किया जाय।

(३) चुनाव-कार्यों में निष्पक्ष वृत्ति से जनशिक्षण का कार्य हाथ में लिया जाय।

(४) चिंतनशील व्यक्तियों द्वारा लेख आदि लिखवा कर स्थानीय समाचार-पत्रों में प्रकाशित कराने की व्यवस्था की जाय।

(५) यदि संभव हो, तो सर्वोदय विचारधारा का ही एक दैनिक समाचार पत्र चलाया जाय।

सर्वोदय-विचारक इन तथा अन्य सुझावों पर विचार करें, तो कोई ठोस कार्यक्रम तैयार हो सकता है। देशव्यापी कार्यक्रम बने, तभी उसमें बल आता है। संक्षेप में इतना ही कहना चाहता हूँ कि सर्वोदय-आंदोलन को हमें वास्तविक जन-आंदोलन बनाना हो तथा जनशक्ति संगठित करना हमारा अभिप्राय हो, तो हमें जनता के जीवन में घुलमिल जाना होगा। ——

हमें आत्म-निर्भर बनना होगा

(विमला बहन)

परमाणु-बमों के इस युग में विश्वशांति को उत्पन्न खतरा संयुक्तराष्ट्र-संघ या ऐसी किसी संस्था से उतने अंश तक दूर नहीं हो सकता, जितने अंश तक व्यक्ति के आचरण से। क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और विश्व-समस्याओं का समाधान प्रत्येक व्यक्ति के विचार और आचरण की शुद्धता पर निर्भर करता है।

भूदान तो पूर्णव्यापी आर्थिक क्रांति के एक अंश का केवल प्रतीक है। भूदान-आन्दोलन भूमि-वितरण के कार्य से समाप्त न होगा। चूँकि भारत खेतिहर देश है तथा इसकी अर्थ-व्यवस्था में भूमि की प्रधानता है, इसलिए भूमि-वितरण को बृहत्तर आर्थिक क्रान्ति-संचालन का केवल एक प्रतीक समझ कर चुना गया है! वस्तुतः भूदान की स्थिति समाप्तप्राय है और ग्रामदान ने इसका स्थान ग्रहण किया है। सभी प्रकार के शोषण का अन्त हो, यही भूदान का लक्ष्य है। वास्तविक खेत जोतने वाले को अपने श्रम का फल मिले, यही उसका ध्येय है। सर्वोदय-आंदोलन का विस्तार, जिसका भूदान एक अंग है, शहरी क्षेत्रों की मिलों, कारखानों (फैक्टरियों) तथा अन्य बड़े उद्योगों में किया जायगा, जिससे उनका शोषण समाप्त हो।

सम्पत्तिधारी सभी व्यक्ति समाज के शत्रु नहीं समझे जाने चाहिए। धन-संग्रह की कामना प्रत्येक मनुष्य में निहित है, किन्तु समझा-बुझा कर धनी व्यक्ति को सत्य और न्याय का गूढ़ अर्थ हृदयंगम कराना चाहिए। मानवता के शब्दकोश में "शत्रु" या इसके तुल्य अन्य कोई शब्द नहीं है। सर्वोदय हृदय-परिवर्तन पर ज्यादा जोर देता है। कानून बना कर कोई मौलिक परिवर्तन नहीं किया जा सकता। यदि कानून प्रभावशाली होता, तो सरकार की मद्य-निषेध-नीति पूर्णतः सफल होती।

गांधीजी ने ऐसे स्वाधीन भारत का स्वप्न देखा था, जिसमें धनी और निर्धन के बीच भेद-भाव न हो और निर्धनता तथा भूख अतीत की चीजें हो जायँ। किन्तु स्वाधीनता के बाद सरकार और जनता उक्त परिवर्तन लाने में विफल रही। अब भी जातीयता, साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीय देशभक्ति, भाषावाद, दलीय गुटबंदी, व्यक्तिगत गुटबंदी और अन्य दुर्गुण मौजूद हैं। औपचारिक ढंग से लोकतंत्र तो स्वाधीन भारत में स्थापित हो गया, किन्तु वास्तविक लोकतंत्र नहीं कायम हुआ। वोट, जो लोकतंत्र में सबसे बड़ा अधिकार है, सदाचार और अन्य गुण पैसे द्वारा खरीदे जा सकते हैं। जनता आत्म-निर्भर नहीं हो पायी है। वह हर बात के लिए सरकार पर निर्भर रहती है। यह स्वाधीनता नहीं है। स्वाधीन देश में प्रत्येक व्यक्ति को स्वाधीन अर्थात् आत्म-निर्भर होना चाहिए।

भूदान-आन्दोलन सन् १९५१ में विनोबाजी द्वारा प्रारम्भ नहीं हुआ, बल्कि यह सन् १९१६ में गांधीजी से शुरू हुआ! सत्य और अहिंसा पर आधारित गांधीजी का यह आन्दोलन ही भारतीय दर्शन और परम्परा की भूमि में जड़ पकड़े हुए है। —— (गौहाटी के एक भाषण से)

www.vinoba.in

विनोबाजी से एक अमेरिकी छात्र की भेंट और प्रश्नोत्तर

[एक तरुण अमेरिकी छात्र ने, जो गत ९ मास से भारत का अध्ययन कर रहे हैं, स्नातक-उपाधि लेने के लिए स्वदेश लौटने के पूर्व विनोबाजी से मुलाकात की। उनके मत से, विनोबाजी से मिले बिना, भारत छोड़ना अर्थहीन था। उन्होंने भारत में अपने निरीक्षण के आधार पर कुछ प्रश्न विनोबाजी के समक्ष रखे। वे प्रश्नोत्तर यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं। —दा० मूँ०]

प्रश्न—मनुष्य कैसे आत्मसंयम और आत्म-पीड़न में भेद कर सकता है ? क्या आचार (रीचुअल्स) प्रस्तुत समस्याओं से भागने का बहाना नहीं है ? क्या आप समझते हैं कि यह दृष्टिकोण सार्वदेशिक है अथवा भारत की ही विशेषता है ?

विनोबा : आप आत्म-संयम और आत्म-पीड़न का अन्तर समझना चाहते हैं। आपने इस पर अपनी प्रतिक्रिया भी व्यक्त की है। मेरी समझ से आत्म-संयम और आत्मपीड़न का अन्तर समझना बहुत स्पष्ट और सरल है। आत्म-संयम से व्यक्ति अपने को पीड़ित नहीं, बल्कि हर्षित अनुभव करता है। आप चार बजे प्रातःकाल उठते हैं। आप समझते हैं कि ऐसा करना स्वास्थ्य और मानसिक उन्नति के लिए लाभप्रद है। आप इस कार्य में हर्ष का अनुभव करते हैं। यदि आप हर्ष का अनुभव नहीं करते, तो यह आत्म-पीड़न है। आत्म-संयम में व्यक्ति कतिपय नियमों का पालन करता है। वह यह समझ कर ऐसा करता है कि ये नियम उत्तम और उसके लिए कल्याणकारी हैं। आप कड़वी दवा लेते हैं। इस कार्य में आपको आन्तरिक हर्ष का अनुभव होना चाहिए। यदि आप ऐसा अनुभव नहीं करते, तो आपने दवा का महत्त्व नहीं समझा। बालक औषधि का महत्त्व समझे बिना दवा लेता है। उसके माता-पिता दवा जबर्दस्ती उसके गले के नीचे उतारते हैं। आत्म-संयम और आत्म-पीड़न में यही अंतर है। भले ही इसका परिणाम समान हो, किंतु मानसिक कारण से यह निश्चय होगा कि अमुक कार्य आत्म-संयम या आत्म-पीड़न का है।

यदि आचार का उचित महत्त्व समझ कर इसका आत्मशुद्धि के साधन के रूप में पालन किया जाय, तो इससे हर्ष उत्पन्न होना चाहिए। बाह्य आचरण नहीं, अपितु निष्ठा महत्त्वपूर्ण है।

समस्याओं से भागने (पलायनवाद) और विश्व की जनता की मनोवृत्ति के संबंध में मेरा कथन है कि अन्य देशों की जनता की मनोवृत्ति क्या है, इसका मुझे तुलनात्मक ज्ञान नहीं है; किंतु यह दृष्टिकोण सम्भवतः सार्वदेशिक है। यदि कोई व्यक्ति अपनी समस्याओं से भागना चाहता हो और इनसे बचने के लिए वह आध्यात्मिक उपाय का अवलंबन करता हो, तो इससे शान्ति का अनुभव वह करता है। किन्तु इस प्रकार की मनोवृत्ति सर्वत्र देखी जाती है। यदि वह उस समस्या से, जिसे वह हल नहीं कर सकता, भागने के लिए धार्मिक बहाने (आचार) का अवलंबन करता हो, तो यह आत्मप्रवंचना है। यह आत्म-प्रवंचना सार्वभौम प्रवृत्ति है; किसी विशेष देश से संबंध नहीं रखती।

प्रश्न—भारत में लोकतंत्र के कार्य के संबंध में आपकी की क्या प्रतिक्रिया है ?

विनोबा : यदि लोकतंत्र का अक्षरशः अनुकरण (पश्चिमी राष्ट्रों का) किया जायगा, तो यह भारत में सफल नहीं होगा। लोकतंत्र अपने पूर्व के कई 'तंत्रों' से अपेक्षाकृत अच्छा है, पर यह भारतीय परम्परा के अनुकूल नहीं है, क्योंकि भारत की अपनी परम्परा है, जिसके अनुसार बहुसंख्यक दल और अल्पसंख्यक दल के मतभेद का यहाँ अस्तित्व नहीं है। एकसाथ बैठ कर सर्वसम्मति से निश्चय करना भारतीय परम्परा है। अमेरिका के 'क्वेकर्स' यही तरीका अपनाते हैं। मेरी समझ से इससे उनकी कोई हानि नहीं होती। यदि पूर्वी लोकतंत्रात्मक देश 'एक मत' का सिद्धांत अपनायें, तो इसका असर होगा।

प्रश्न—क्या भारतवासी सिद्धांतों की अपेक्षा व्यक्तियों के अधिक प्रेमी हैं ?

विनोबा : भारतवासी व्यक्तियों के प्रेमी नहीं हैं, यद्यपि वे अच्छे व्यक्तियों का अनुकरण करते हैं। यदि आप व्यक्तियों और जीवन-सिद्धांतों की तुलना करें, तो भारतीय स्वभावतः व्यक्तियों का अनुकरण करने की अपेक्षा सिद्धांतों का पालन करना अधिक पसन्द करेंगे—वस्तुतः वे व्यक्तियों की परवाह नहीं करेंगे। भारतीय परम्परा में बहुत से (महान्) व्यक्ति हुए हैं, किंतु जिस प्रकार ईसा के नाम पर ईसाई-धर्म का और मोहम्मद के नाम पर मुस्लिम-धर्म का नामकरण हुआ, उसी प्रकार किसी व्यक्ति के नाम पर हिंदू-धर्म का नामकरण नहीं हुआ। भारत में कितने ही आध्यात्मिक महापुरुष हुए, किन्तु भारतीय मानस किसी एक व्यक्ति को एकमात्र अधिकारी स्वीकार नहीं करता। व्यक्ति की अपेक्षा सत्य और अहिंसा को भारतीय तरजीह देगा और व्यक्तियों—महापुरुषों—को उक्त सिद्धांतों की अभिव्यक्ति समझेगा।

प्रश्न—नेहरूजी के बारे में आप क्या कहेंगे ?

विनोबा : आप जानते हैं कि राष्ट्रपति रूज़वेल्ट चार बार निर्वाचित हुए थे। यदि वे जीवित होते, तो पाँचवीं बार भी चुने गये होते। इसका अर्थ यह है कि बड़े व्यक्तियों में जादू होता है, जो दूसरों को आकर्षित करता है। यह बात प्रत्येक राष्ट्र में पायी जाती है। क्या हिटलर ने यह दावा नहीं किया था कि मैं भी अत्यधिक बहुसंख्यक दल द्वारा निर्वाचित हूँ ?

अमेरिकी छात्र—किन्तु रूज़वेल्ट अपवाद थे।

विनोबा—एक प्रकार से आपका कथन सत्य है। इसके अतिरिक्त, बहुत से भारतीय शिक्षित नहीं हैं। अतः उन पर सिद्धान्त की अपेक्षा निष्ठा का प्रभाव अधिक है। किन्तु उचित शिक्षा के प्रसार से इस स्थिति में सुधार होगा।

प्रश्न—आप पूर्व और पश्चिम की तुलना कैसे करेंगे ?

विनोबा : इसका उत्तर जितनी मेरी जानकारी है, उतनी जानकारी के आधार पर ही दूँगा। मैं पूर्व और पश्चिम के बीच निर्णय नहीं करूँगा। पश्चिमी राष्ट्रों द्वारा सहकारिता का प्रयत्न, उनका सर्वोत्तम गुण है। किन्तु सत्कार्य करते हुए भी वे उग्र हो सकते हैं, यह उनका अति निकृष्ट गुण है। उन्हें 'व्यक्ति' का भय नहीं है, अतः उग्रता स्वाभाविक है। ये अभी बहुत तरुण राष्ट्र हैं। अमेरिका केवल ५०० वर्ष पुराना है। किन्तु भारत १० हजार वर्ष प्राचीन है। अतः अनुभव प्राप्त करते-करते इनकी उग्रता कम हो जायगी। लेकिन पश्चिमी राष्ट्रों में कितनी ही अच्छाइयाँ हैं। हमें प्रत्येक देश से सद्गुण लेने चाहिए।

प्रश्न—भारत का वह कौनसा विशिष्ट गुण है, जो उसे पश्चिमी राष्ट्रों से पृथक् करता है ?

विनोबा : शायद आप ही इसके सर्वोत्तम निर्णायक होंगे। मैं स्वयं अपना मुख अपनी आँखों से कैसे देख सकता हूँ ? मेरे मत से भारत का प्रमुख गुण यह है कि वह पृथकतावादी (एक्स्क्लूजिव) नहीं है, वह (अपने मानस में) दूसरों को स्थान देने के लिए प्रस्तुत रहता (इन्क्लूजिव) है। भारतीय तुरन्त बाइबिल पढ़ने के लिए तैयार हो जायेंगे, किन्तु ईसाइयों में यह बात नहीं है। उन्हें समझाना होगा। उनके धर्मानुसार जब तक कोई व्यक्ति ईसाई न हो जाय, तब तक उसे मुक्ति नहीं मिल सकती। किन्तु 'हिन्दू धर्म' ऐसा नहीं कहता। हिन्दू धर्म का यह कथन नहीं है कि जब तक कोई व्यक्ति भगवान् कृष्ण या राम के चरणों में आत्म-समर्पण न कर दे, तब तक उसे मोक्ष नहीं मिल सकता। हमारी निष्ठा हमारे जीवन में व्यक्त होनी चाहिए और वह वातावरण द्वारा व्याप्त हो जायगी।

प्रश्न—क्या आपके मत से भूदान अमेरिका में भी चल सकता है ?

विनोबा : भूदान राष्ट्रीय आन्दोलन ही नहीं है; यह विश्वजनीन आन्दोलन है। सभी देशों में इसका प्रयोग किया जा सकता है। भूदान की विचारधारा यह है कि हम सुखोपभोग में दूसरों को भी साझी बनायें। हम अकेले ही सुख का उपभोग न करें। और ऐसा करना मानव-स्वभाव है। क्या धूम्रपान करने वाला धूम्रपान करने के पूर्व अपने पड़ोसी को सिगरेट नहीं देता ? भूदान कितना सरल है ? यह मनुष्यों के बीच और राष्ट्रों के बीच सारे व्यवधान दूर करता है। न कोई बड़ा, न कोई छोटा है। सभी मित्र हैं। कहावत है कि 'जियो और जीने दो।' मैं कहता हूँ, 'जीने दो और जियो।' 'जियो और जीने दो', अच्छा सिद्धांत है, पर क्या मैं इससे और अच्छा सिद्धांत न पेश करूँ ? हमारा पहला कर्तव्य है, दूसरे को जीने देना। इसलिए उक्त सूत्र को उल्टा कर दें। पहले दूसरों को सुख मिले, मुझे अन्त में मिले। अंग्रेजी भाषा में 'आई' (मैं) सदा बड़े अक्षर (कैपिटल) की तरह लिखा जाता है, जब कि मेरे मत से 'वी' (हम) बड़े अक्षर के रूप में और 'आई' (मैं) छोटे अक्षर की भाँति लिखे जाने चाहिए।

शिविर—पेनमंगलोर, २८-८-'५७

www.vinoba.in

कर्नाटक की क्रांतियात्रा से–

(महादेवी)

२३ अगस्त की रात की बात है। बाबा रोज के मुताबिक सवा आठ बजे सो गये थे। करीब पौने दस बजे होंगे, बाबा की धीमी-सी आवाज आयी, "अरे, मुझे बिच्छू ने काटा।" मैं दौड़ी और मसहरी को उठाया। बाबा अपने दाहिने हाथ से बायें हाथ की कलाई जोरों से पकड़े हुए शांत बैठे हुए थे। बायें हाथ की तर्जनी के ऊपर बिच्छू का डंक था। दो काले बिंदु दिखायी देते थे। शंका आयी, बिच्छू है या और कोई विषारी प्राणी? बिस्तरे पर हम लोगों ने शोध किया। वह तो बड़ा लंबा कनखजूरा था! दैववशात् बेंगलूर के डा० नटराजन् मौजूद थे। उन्होंने दवाई लगायी और वैद्य ने भी कुछ दवाई लगा कर ऊपर कुछ मंत्र भी फूँका। लेकिन बाबा की वेदना बढ़ती गयी। ठंड लगने लगी। अंगीठी से सेंका भी। सारी रात नींद नहीं आयी। तीव्र वेदना थी। वेदना के कारण बाबा के मुँह से जब ध्वनि निकलती थी, तब हम सबके दिल में अतीव वेदना होती थी। कोई चारा नहीं था। हम सब मन ही मन परमेश्वर की प्रार्थना करते थे। दूसरे दिन वेदना कम हुई। लेकिन हथेली का भाग सूज गया था। ७ दिन तक वह सूजन वैसी ही थी। फिर खुजली होने लगी। अब ठीक है।

केरल में बाबा को जो खाँसी शुरू हुई थी, यद्यपि अब वह जोरदार नहीं है, फिर भी वह निश्शेष नहीं हुई है। दिन में और रात में कई बार आ जाती है। आजकल बाबा का शरीर काफी कमजोर हो गया है। लेकिन यात्रा के सभी कार्यक्रम बराबर चालू हैं। इसलिए तबीअत ठीक ही है, ऐसा समझना चाहिए। आहार का प्रमाण १३००-१४०० कैलरीज हैं। कभी-कभी सिर में अतीव वेदना महसूस करते हैं। (सिर दर्द की शिकायत बाबा को कभी नहीं थी। वह केरळ में शुरू हुई।) आजकल करीब-करीब रोज सिर में दर्द रहता है। ता० ३ सितम्बर को मंगलूर से डॉक्टर आये थे। उन्होंने ब्लड प्रेशर देखा। ९०/५० था। बहुत कम है। बाबा ने कहा, ज्यादा चलने से B. P. (ब्लड प्रेशर) बढ़ जायेगा!

लोगों का प्रेम, व्यवस्था आदि में किसी प्रकार की कोई कमी नहीं है। पड़ाव की दूरी ६-७ मील ही रखी जाती है, जो ठीक नापी हुई रहती है, जब कि विनोबा दस मील के लिए कहते हैं!

वेदों की ऋचाओं में गढ़े हुए चित्त को बाहर लाकर पत्र-व्यवहारादि व्यावहारिक बाह्य कामों में लगाना विनोबा के लिए कभी बड़ा अस्वाभाविक हो जाता है, लेकिन लोगों को मार्गदर्शन करने का सवाल जहाँ आता है और सुदूर पथ के बंधु-मित्रों के साथ काम का संबंध जहाँ तक आता है, पत्रव्यवहार भी एक अनिवार्य काम बन जाता है। उससे लोगों को काफी आश्वासन मिलता है। अतः लोगों पर अन्याय न हो, इसलिए उन्होंने अपनी सुविधा के लिए सारे प्रांतों को सप्ताह के सात दिनों में बाँट कर पत्रव्यवहार करना शुरू किया है। वह विचार श्री प्रभावती बहन को उन्होंने विनोद में लिखा था। उसका थोड़ा मनोरंजक अंश निम्नलिखित है :

"तुमको जान कर खुशी होगी कि मैंने बिहारवालों के साथ पत्र-व्यवहार के लिए एक दिन तय किया है। हिंदुस्तान के सात ज़ोन बनाये हैं और एक-एक ज़ोन के लिए एक-एक वार (दिन) मुकर्रर किया है। ओड़ीसा, बंगाल, आसाम के लिए इतवार है, क्योंकि वहाँ प्रथम सूर्योदय होता है! बिहार के लिए सोमवार है, क्योंकि बिहारी सौम्य स्वभाव के होते हैं। मंगल है, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश के लिए। वहाँ काशी, प्रयाग, मथुरा, अयोध्या-सब मंगल ही मंगल है! दिल्ली, राजस्थान, पंजाब के लिए बुधवार है, क्योंकि तुम जानती हो कि 'बुध' माने अक्लवाले; और आजकल ये बहुत सारे दिल्ली में रहते हैं! गुरुवार, गुजरात–महाराष्ट्र के लिए रखा है, क्योंकि बाबा के लिए वह गुरु-स्थान है। वहाँ बाबा ने विद्या पायी है। शुक्रवार, लक्ष्मी का वार माना जाता है, वह कर्नाटक, केरळ के लिए है। लक्ष्मी याने स्वर्ण। यह कोलार-गोल्ड फील्डस् में मिलता है और लक्ष्मी याने शोभा, सृष्टि-सौंदर्य केरळ में उपलब्ध है। तमिल-आंध्र बचता है। उसके लिए बचा हुआ शनिवार है। और प्रदेशों के लिए भी शनि ही रखना पड़ेगा, क्योंकि 'आणविक' शस्त्रों का महाशनि उनके पीछे लगा हुआ है! इतवार से आरंभ करके शनिवार तक यथाक्रम सारे भारत के नक्शों पर नजर घुमा लो, तो यह तुमको सहज याद रह जायगा!"

गुजरात में ग्रामदान का बढ़ता प्रवाह

(हरिवल्लभ परीख)

हर आंदोलन अक्सर लोकक्रांति की मंशा से चलाया जाता है। फिर भी कई कारणों से वह कुछ वर्गों और सीमित लोगों तक ही मर्यादित रह रह जाता है। ऐसी स्थिति भूदान-आंदोलन में आ ही रही थी कि उसने ग्रामदान का रूप लेकर जन-आंदोलन का स्वरूप धारण कर लिया।

ऐसे ही जन आंदोलन का एक प्रयोग हाल ही में गुजरात के बड़ौदा जिले के रंगपुर आश्रमवाले प्रदेश में किया गया। १९५७ की १५ अगस्त को एक यात्री-दल रंगपुर से चला। 'ग्रामदान-कूच' के नाम से ५० यात्री बारिश में निकल पड़े। कूच की अगुवाई ग्रामजनों ने की। ग्रामदानी गाँवों के भाई अग्रिम टोली में जाते, खाने की व्यवस्था करते, अपनी भाषा में लोगों को बाँट कर खाने की बात समझाते, मालीकी के महापातक से छुटकारा दिलाने वाले ग्रामदान-आंदोलन का माहात्म्य समझाते। फिर 'कूच' वहाँ पहुँचता। गाँववाले स्वागत करते, भोजन भजन और अंत में भाषण-संभाषण होता। ग्रामदानी गाँववाले जोर लगाते। हम कार्यकरों में से कोई बोलते–उनकी भाषा में ही। अंत में ग्रामदान होता है।

१५ दिन की यात्रा में ११ गाँवों ने ग्रामदान किया, ४ गाँवों ने आंशिक ग्रामदान किया। चार तहसीलों का दौरा हुआ, जिनमें १२७ गाँवों का पयटन हुआ। १५० मील चले। ३० सभाएँ हुईं, १२ वार्तालाप हुए। ४०,००० जनसंख्या तक ग्रामदान-संदेश पहुँचा। १५ कार्यकर्ताओं ने हिस्सा लिया। २५ किसानों ने कूच में पूरा समय लगाया। ग्रामदानी गाँवों के नाम हैं :

(१) सिहाद्रा (२) सातबेडीया (३) रामसरी (४) सारंगपुर (५) कंकावटी (६) कंकुवासणा (७) खोखरा (८) समरपुरा (९) तलेटी (१०) कलेडिया (११) कानाकुवाँ ग्रामदान में मिले।

आंशिक ग्रामदान-हुए :

(१) पखटा (२) कुंडीया (३) कृष्णापुरा (४) सांढीयापुरा

३० अगस्त को ग्रामदान-कूच का अंतिम समारोह श्री नारायणभाई देसाई के हाथों हुआ। सब ग्रामदानी गाँवों के भाइयों ने इसमें हिस्सा लिया। समारोह के रोज ही ग्रामदानी भाई नये चार ग्रामदान लाये। श्री नारायणभाई देसाई ने दीक्षांत-समारोह में ग्रामदानी गाँवों के भाइयों का योग्य मार्गदर्शन किया, धर्म की इस ज्योति को प्रदेश के कोने-कोने में पहुँचाने का आदेश दिया। विनोबाजी यहाँ आवें, उससे पहले सारे गाँव मालीकी के पाप से मुक्त हो जायँ, ऐसा जोरदार प्रयत्न करने का आदेश दिया। रात को फिर से इकट्ठा हुए। हमने बताया कि अब यह काम आपका है, हरेक ग्रामदानी गाँव अपने गाँव के ४ या ५ व्यक्तियों को इस धर्म-कार्य के लिए मुक्त करे, उनकी जिम्मेवारी गाँव उठायें। ऐसा होगा, तो ही क्रांति सफल होगी। हर्षनादों के साथ विनोबाजी की एक साल की कैद के इस विचार को ग्रामदानियों ने कबूल करके इस क्रांति को लोकक्रांति का स्वरूप देने की दिशा में पहला कदम हिम्मतपूर्वक उठाया।

गुजरात के ग्रामदानों का विवरण :

क्रम	ग्राम	तालुका	जिला	जनसंख्या	कुल जमीन : एकड़
१.	गजलांवाट-छोटा उदेपुर		बड़ोदा	२०	२६५–०
२.	खांडणिया	,,	,,	१३०	५१२-३४
३.	रंगपुर	,,	,,	३२०	४८७-१२
४.	खड़किया	नसवाडी	,,	२८०	१५६-२९
५.	जजवा	,,	,,	५६	१११–१९
६.	मातोरा	,,	,,	३१०	४०८–३१
७.	करमदी	,,	,,	४६०	४४२-४
८.	जोज	जबुगाम	,,	१३०	२०१–२८
९.	नानासामेरा भिलोड़ा		साबरकांठा	५०२	२८०–०
१०.	गोढकुश्की	,,	,,	२००	—
११.	जामगढ़	मेघरज	,,	२२५	३३७-३०
१२.	पीपळिया	,,	,,	१२०	८१–१६
१३.	छींकारी	,,	,,	२२३	३७४–१७
१४.	वांसळी	,,	,,	७०	—
१५.	कांकेर	गरुडेश्वर	भरूच	१२७	१२७-०
१६.	काटखड़ी	,,	,,	१६५	१६५-०
१७.	इश्वाणी	पालनपुर	बनासकांठा	७०	८०-०

—नारायण देसाई

www.vinoba.in

संस्कृति और प्रकृति के समन्वय का फल!

(विनोबा)

कोडगू प्रदेश (कुर्ग, मैसूर राज्य) हिन्दुस्तान का रमणीय प्रदेश है। यहाँ दो प्रकार का आनंद इकट्ठा हुआ है। एक है, निसर्ग-दर्शन का आनंद–घने जंगल, उत्तम पहाड़, बड़े-बड़े वृक्षादि। सारा हरा-भरा बहुत रमणीय मालूम होता है। दूसरा आनंद है, यहाँ की शिक्षित जनता। हिन्दुस्तान के जिन हिस्सों में अच्छा शिक्षण है, उनमें से यह एक प्रदेश है। शिक्षण से संस्कृति बढ़ती है और जंगल के संपर्क से प्रकृति की शुद्धि होती है। इस तरह यहाँ प्रकृति का और संस्कृति का, ऐसे दोनों आनंद इकट्ठे हुए हैं। ऐसा योग देखने में बहुत कम आता है। कहीं जंगल ही जंगल हैं, तो शिक्षण नहीं और जहाँ शिक्षण है, वहाँ जंगल नहीं!

इतनी सारी बहनें यहाँ आयी हैं। यह भी शिक्षण के कारण हुआ है। हम सबने इस प्रदेश का खास नृत्य अभी यहाँ देखा। यह भी शिक्षण का ही परिणाम है। इस तरह दोनों लक्षण जहाँ इकट्ठे होते हैं, वहाँ बहुत बड़े काम हो सकते हैं। प्रकृति के साथ अखंड संबंध और मानसिक संस्कार का विकास, ये दो जहाँ एक होते हैं, वहाँ फिर किसी प्रकार की विकृति नहीं होती। जो चीज बहुत बुरी है, वह जीवन में बैठ ही नहीं सकती।

इस प्रदेश में सर्वोदय-राज्य होना चाहिए। सर्वोदय राज्य याने वही, जहाँ प्रकृति और संस्कृति का संबंध है। कुदरत के साथ हरेक मनुष्य संबंध रखेगा, दोनों हाथों से काम करेगा, खेतों की अच्छी सेवा करेगा, उत्तम अध्ययन करेगा, संगीत का विकास होगा, भक्ति और ज्ञान बढ़ेगा, यही है सर्वोदय-समाज। इसमें हरेक के मानसिक संस्कार का विकास होगा और हरेक को कुदरत की सेवा करने का मौका मिलेगा।

इन दिनों जो लोग शिक्षण पाते हैं, वे हाथों से काम करना अच्छा नहीं मानते। यह उनका दोष नहीं है, गलत शिक्षण-पद्धति का दोष है। जहाँ अपने हाथों से काम करना छोड़ देते हैं, वहाँ दूसरों के हाथों से पैदा की हुई चीज अपनाने की कोशिश चलती है। याने वह एक प्रकार की श्रम की चोरी ही है। फिर भी यह सारा आज आधुनिक समाज में चलता है। दो हाथों से स्वयं काम करने में उनको शर्म मालूम होती है। हम अपने दोनों हाथों से काम करते हैं, पसीने से रोटी कमाते हैं, तो हमारे हाथों से गलत काम कभी नहीं होगा, बुद्धि ताजी रहेगी, मन भी स्वच्छ और निर्मल रहेगा, भूख अच्छी लगेगी। ये सारे श्रम के आनंद हैं। इसी तरह होना चाहिए और उसके साथ-साथ सारा समाज भी एकरस बनाना है। परमेश्वर ने जो भी शक्ति हमको दी है, वह ईश्वर की ही सेवा में लगानी है। जो भी कोई हमारे सामने आता है, उसकी सेवा हमको करनी है। उसकी सेवा याने ईश्वर की सेवा, ऐसा समझना चाहिए। इस तरह जब सामाजिक सेवा और प्रकृति की सेवा मनुष्य के जीवन में दाखिल होगी, तब मनुष्य का जीवन सुन्दर बनेगा।

प्रकृति की सेवा से मनुष्य को बहुत लाभ होगा। दीर्घायु मिलेगी, आरोग्य बढ़ेगा और अन्न भी बढ़ेगा। इस प्रकार का वरदान प्रकृति-देवता देगी। समाज की सेवा से आपस-आपस का प्रेमभाव बढ़ेगा, परस्पर-सहयोग बढ़ेगा। लेकिन आज मनुष्य-मनुष्य के बीच संघर्ष है। इस वास्ते समाज-देवता प्रसन्न नहीं होते और जब समाज-देवता की कृपा नहीं होती, तब जीवन में समाधान नहीं होता और सृष्टि-देवता की कृपा न रही, तो जीवन में प्राण ही नहीं रहता, क्योंकि सारा प्राण अन्न से बना है। हमको जो अन्न हासिल होता है, वह प्रकृति की सेवा से ही हासिल होता है। इसलिए दोनों देवताओं की कृपा हम पर होनी चाहिए। देवताओं की कृपा हासिल करने के लिए हरेक को उनकी सेवा करने का पूरा मौका मिलना चाहिए।

अभी यहाँ जो सुन्दर समूह-नृत्य हुआ, उस पर से हम कहते हैं कि सामुदायिक नृत्य भी ग्रामदान का लक्षण है। केरलवाले हमसे कहते थे, "दूसरे प्रांतों में ग्रामदान हुआ, परंतु यहाँ जरा मुश्किल ही मामला लगता है।" हमने कहा, "यह बात बिलकुल ही गलत है। आपके यहाँ कथकली (केरल का प्रसिद्ध नृत्य) चलता है या नहीं? जहाँ सामूहिक नृत्य है, वहाँ सामुदायिक जीवन की बात लोग आसानी से समझते हैं! जहाँ के लोग एकसाथ खेलते हैं, नाचते हैं, गाते हैं, वे क्या एक-साथ काम नहीं करेंगे? इस वास्ते ग्रामदान यहाँ बिलकुल आसान है।" उनको विश्वास हो गया और उन्होंने देखा कि चार महीने में किसी भी प्रांत से कम ग्रामदान वहाँ नहीं हुए! वैसी ही हालत इस प्रदेश की हम देखते हैं। लेकिन जो ग्रामदान माँगने जायेंगे, उनको सिर्फ व्याख्यान नहीं देना है, लोगों के साथ मिल कर काम करना होगा, उनके साथ नाचना होगा!

यह खूबी भागवत में बतायी गयी है। गोकुल में भगवान् कृष्ण का राज्य था। सब एकसाथ मिल कर रहते थे, काम करते थे, परिणामस्वरूप गोकुल मजबूत किला बन गया। कंस का राज सारे मथुरा पर चला, लेकिन गोकुल में स्वराज्य था। वहाँ कंस का कुछ नहीं चला, क्योंकि वे सामूहिक गायन और नर्तन करते थे। इस वास्ते एकसाथ मिल कर काम करने की उनकी वृत्ति बनी थी। ग्रामदान में यही होगा। सारा गाँव एक-परिवार, जमीन सबकी, मालिक परमेश्वर, सब मिलजुल कर काम करेंगे, बाँट कर खायेंगे। सब मिल कर ईश्वर का भजन करेंगे और नाचेंगे। नारद स्वयं नाचते थे, गाते थे। उन्होंने नाचना, गाना भक्तों को सिखाया है। जहाँ भगवान् के भक्त होते हैं, वहाँ नाचना-गाना चलता है और हम समझते हैं कि जहाँ भक्ति है, वहाँ ग्रामदान फैलता है।

यह आपको करना है। नाहक जमीन की मालकियत सिर पर उठा ली है। वह तो दिल के टुकड़े करती है। एक ही गाँव में सब एकसाथ रहते हैं, एक ही हवा सब सेवन करते हैं, एक ही पानी सब पीते हैं, एक ही जमीन पर सब रहते हैं, सबके सारे दुख-सुख समान हैं। फिर उस हालत में जमीन की निजी मालकियत क्यों? हम समझते हैं कि अगर बहनें इस काम को उठा लेती हैं, तो काम जल्दी होगा, क्योंकि जहाँ मातृ-देवता सामने खड़ी होती है, वहाँ मातृ-भक्ति पैदा होती है। इसके आगे बहनों को बड़े-बड़े काम करने हैं। गृह-शिक्षण तो उन्हींके हाथ में है ही। परंतु सामाजिक शिक्षण भी उनको अपने हाथ में लेना होगा और पुरुषों को हिंसा की ओर जाने से रोकना होगा, उन पर अंकुश रखना होगा। स्त्री तो अहिंसा, दया, प्रेम, करुणा की मूर्ति है। वह अगर सामने आती है, तो झगड़े मिट जाते हैं और शांति-प्रेम निर्माण होता है। इस वास्ते यह काम स्त्रियों को उठाना चाहिए।

शहरों में बड़े-बड़े लोग रहते हैं। वे पॉवर-पॉलिटिक्स की शराब पी चुके हैं। इस वास्ते वे निरन्तर झगड़ते हैं। झगड़ने दो उनको। परन्तु गाँव के लोगों को प्रथम हिम्मत के साथ आगे आना चाहिए। फिर बाद में उनके पीछे-पीछे शहरवाले आयेंगे। यह बाबा का आन्दोलन गाँव के लोग ही सफल करने वाले हैं। शहर के लोग तो उनके अनुयायी बनेंगे। गीता में भगवान् ने कहा है–"स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्राः –स्त्री, वैश्य और शूद्र मेरा काम करने के लिए प्रथम आगे आयेंगे।" वैसे ही बाबा का काम स्त्रियाँ, किसान, मजदूर करने वाले हैं। भाइयो, हम आशा करते हैं कि जिस प्रदेश से देश के वास्ते मर मिटने के लिए सैनिक निकले, उसी प्रदेश में निष्काम सेवा-कार्य करने के लिए सेना खड़ी होगी।

(मुरनाड़, कूर्ग, ८-९-५७)

—

ग्रामदानी गाँवों में सहयोग-समिति का संगठन

(वद्यनाथ प्रसाद चौधरी)

"भूदान-यज्ञ" के ६ सितम्बर के अंक में मान्यश्री अण्णा साहब का "ग्रामदानी गाँव और प्रचलित कानूनी स्थिति" संबंधी एक लेख (पत्र) प्रकाशित हुआ है। उसमें "ग्रामदानी गाँवों में कोआपरेटिव ऐक्ट के अनुसार हम क्या कर सकते हैं," इसका दिशासूचन किया गया है। उस संबंध में बिहार प्रांत में इधर कुछ प्रयत्न किये गये हैं। उस पर से जो कुछ संभावनाएँ दीख पड़ती हैं, उसे यहाँ विचारार्थ उपस्थित कर रहा हूँ।

जहाँ भूदान की जमीन लगभग एक सौ एकड़ के चकले में बाँटी गयी हो और जहाँ उसमें नयी बस्ती बसा कर उसे आबाद करना हो, ऐसे १० चकलों में २५० परिवारों को बसाने के हेतु, 'पायलट-प्रोजेक्ट' के तौर पर उसे चलाने के लिए, २५०००० रु० की योजना सरकार ने स्वीकृत की है। योजना यह है कि ऐसे प्रत्येक चकले के लिए एक सहयोग-समिति बनायी जायेगी और उस समिति को सरकार की ओर से प्रति परिवार के लिए जो एक हजार के हिसाब से (जिसमें ७७५) अनुदान में एवं २२५) ऋण के रूप में) रुपया मिलने वाला है, वह पूरी रकम दे दी जायगी और उस समिति के द्वारा ही उस रुपये का उपयोग जमीन तोड़ने, हल, बैल, बीज आदि मुहैया करने, भूदान-किसानों की झोपड़ी तैयार करने, कुआँ तैयार करने आदि में किया जायेगा। भूदान की जमीन उसमें बसने वाले भूदान-किसानों को अलग-अलग न बाँट कर पूरा चकला उस कोआपरेटिव सोसायटी को भूदान-कमिटी सेटल् कर देगी। आज बिहार का जो भूदान-ऐक्ट है, उसमें भूदान-किसानों को व्यक्तिगत रूप से ही जमीन सेटल् कर देने की व्यवस्था है। पर यह तय हो चुका है कि ऐक्ट में ऐसा सुधार कर लिया जायगा कि भूदान-कमिटी व्यक्तिगत तथा सामूहिक, दोनों प्रकार

www.vinoba.in

से जमीन का वितरण कर सकेगी। इन 'पायलट प्रोजेक्टों' में सहयोग-समिति बनाने के लिए भूदान-कमिटी के सदस्यों एवं कोआपरेटिव-विभाग के अधिकारियों में विचार-विमर्श होकर जो उपधाराएँ तैयार की गयी हैं, उनके अनुसार 'सर्वोदय-सहयोग-समिति' नाम रखने का निश्चय किया गया है और उसमें श्री अण्णा साहब ने जो सूचनाएँ की हैं, करीब-करीब उनकी व्यवस्था भी हो गयी है।

सहयोग-समिति सर्वसम्मति से निर्णय करके सामूहिक खेती कर सकती है या अपने सदस्यों को अलग-अलग खेती के लिए जमीन अलॉट कर सकती है। जब कभी हम तय करें, पुनर्वितरण कर सकती है। किसी परिवार को जो जमीन खेती के लिए दी जायगी, वह उसे अपने परिवार के सदस्यों में बँटवारा करके उसके छोटे-छोटे टुकड़े नहीं कर सकता। कोई सदस्य इस्तीफा देकर जाना चाहेगा, तो उसको जमीन के एवज में कोई मुआवजा भी नहीं मिल सकेगा। सहयोग-समिति अपनी आवश्यकता के लिए और जमीन प्राप्त कर सकती है, आदि।

सोचा यह गया है कि ग्रामदानी गाँव में भी इन उपधाराओं के अनुसार उस गाँव में बसने वाले पहले के जो भूमिवान तथा भूमिहीन हैं, सभी को मिला कर सहयोग-समिति बनायी जाय और ग्रामदान में सम्मिलित होने वाले भूमिवानों के दानपत्र भूदान-ऐक्ट के अनुसार मंजूर करा कर भूदान-कमिटी सारी जमीन को उस गाँव की सहयोग-समिति को सेटल् कर दे। इस रीति से उस गाँव के भूमिवान लोगों की व्यक्तिगत मालकियत समाप्त होकर उन भूमिवानों की तथा उस गाँव के तमाम भूमिहीनों की-और सभी लोगों की-बनी हुई सहयोग-समिति की सामूहिक मालकियत (कलेक्टिव ओनरशीप) हो जायगी। नये सदस्यों को उसमें दाखिल करने का हक सहयोग-समिति को रहेगा। कोई सदस्य उसमें से निकलना चाहेगा, तो जमीन के बदले कोई मुआवजा नहीं मिल सकेगा। ऐसी सहयोग-समिति, यदि कोई गाँव पूरा ग्रामदानी नहीं हुआ है, तो जितने परिवारों ने भूमि की मालकियत का विसर्जन किया है और वे लोग जितने भूमिहीन परिवारों को उसमें सम्मिलित करते हैं, उनको सम्मिलित करके आसानी से बनायी जा सकती है।

आज हम भूदान के दानपत्र प्राप्त करते हैं, फिर उसे भूदान-ऐक्ट के अनुसार कन्फर्म कराने की आवश्यकता रहती है और उसके बाद ही उसे सहयोग-समिति को बाजाप्ता दिया जा सकता है। मेरा सुझाव है कि इसके बजाय ऐसी व्यवस्था की जाय कि जो लोग व्यक्तिगत मालकियत का विसर्जन करना चाहें और जितने भूमिहीनों को उसमें वे सम्मिलित करना चाहें, वे लोग मिल कर सहयोग-समिति बना लें और उस सहयोग-समिति के भूमिवान सदस्य अपनी भूमि के मालकियत के विसर्जन का दानपत्र भूदान-कमेटी को न देकर अपनी बनायी हुई रजिस्टर्ड सहयोग-समिति को ही दें।

इस कार्य में सहूलियत पैदा करने की दृष्टि से सरकार इतना कर दे कि भूदान-ऐक्ट के अनुसार स्टाम्प की जो छूट भूदान-दाताओं को या सरकारी संस्थाओं के लिए भूमिदान देने वालों को दी गयी है, कोआपरेटिव को अपनी जमीन का दान देने वालों को भी वह सुविधा प्रदान की जाय तथा जिस गाँव में १० परिवार से अधिक लोग अपनी भूमि का दानपत्र कोआपरेटिव को देने को तैयार हों, रजिस्ट्रार सरकारी खर्च पर उस गाँव में जाकर रजिस्ट्री की विधि सम्पन्न कर दे।

प्रश्न उठेगा कि अपनी सारी जमीन का दान कर देने के बाद हमारा क्या होगा ? दान की हुई जमीन में से पुनः अपने लिए लेना कहाँ तक उचित है ? ऐसे कई सवाल आज ग्रामदान में सम्मिलित होने वालों को परेशान करते रहते हैं। अतः गाँव में ही आपस में सहयोग-समिति बना कर जो भूमिहीन हैं, उन्हें भी उस सहयोग-समिति में सम्मिलित करके अपनी मालकियत उस सहयोग-समिति को अर्पण कर देने की बात कुछ अधिक आसानी से लोगों की समझ में आ सकेगी। सरकार कर्ज देने के लिए सिक्युरिटी चाहती है। गाँव की बनी हुई ऐसी कोआपरेटिव समिति के पास जमीन की भी सिक्युरिटी बनी रहेगी। उस सहयोग-समिति के द्वारा कृषि-सुधार, ग्रामोद्योग आदि निर्माण-कार्य भी किये जा सकेंगे।

आशा है, मान्यश्री अण्णा साहब ने जो दिशासूचन किया है और जिस दिशा में बिहार में कुछ प्रत्यन भी किये गये हैं, उस पर और भी गंभीरता से एवं विस्तार से चर्चा करके इस मार्ग को विस्तृत तथा सरल बनाने की चेष्टा की जायगी। मैसूर में सारे देश के लोग विनोबाजी के निकट इकट्ठे हो रहे हैं। उस अवसर पर इस दिशा में भी विचार-विमर्श किया जायगा, ऐसी हमें उम्मीद है।

...भूदान और ग्रामदान-आंदोलन में सहयोग के प्रश्न पर केरल-सरकार आचार्य विनोबाजी से चर्चा करेगी और हमारे भूमिसुधार के कार्य में उनसे आशीर्वाद की भी मांग करेगी।

लेकिन, समाज में आर्थिक क्रांति के संबंध में विनोबाजी के विचार ऐसे हैं कि जिन्हें कोई सरकार कानून के द्वारा कार्यान्वित नहीं कर सकती।

'भारत' से, ता० १७-९-५७ —नम्बूद्रीपाद (केरल के मुख्यमंत्री)

असम के समाचार

१६ अगस्त से १४ सितंबर तक असम प्रांत के २१ शहरों में ६० सभाओं द्वारा भूदान और सर्वोदय-संदेश प्रचारित किया। पाँच कॉलेजों में सर्वोदय-स्वाध्याय-मंडलों की स्थापना की। ६०० रु० का असमिया भाषा का साहित्य बेचा। असम प्रदेश की प्रकाशन-समिति के लिए ५००० रु० वार्षिक की मदद प्राप्त की। ग्रामदानी गाँवों में काम करने के लिए १६ कार्यकर्ता तैयार हुए। अक्टूबर में सब पक्षों के कार्यकर्ताओं के लिए सात दिनों का स्वाध्याय-शिविर करने का तय किया गया। ग्रामदानी गाँवों में कार्य करने वाले ५० कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षणार्थ तीन माह का विद्यालय चलेगा। कॉलेज-छात्रों के लिए ता. १४ से १७ सितंबर तक शिविर हुआ।

(पत्र से) —विमला

विनोबाजी का कार्यक्रम

सितम्बर ता. २० से २३ तक इल्लावल और ता. २४ से २८ तक मैसूर।

श्री विनोबाजी और वल्लभस्वामी का मैसूर का पता—मार्फत: श्री मंजुनाथन्, २७५ दीवान्स रोड, मैसूर (द. भा.)

प्रकाशन-समाचार

चिन्तन के क्षणों में—ले० म० भगवानदीन, पृष्ठ ९६, मूल्य ॥)

इस पुस्तक में मनुष्य के दैनिक जीवन से सम्बद्ध स्नेह, डर, क्रोध, लोभ, परिग्रह, माया आदि विषयों पर लेखक के स्वतंत्र विचारों का संकलन है, जो विचारों के पैनेपन के लिए अपना सानी नहीं रखता।

सपूत—ले० श्री रामाश्रय दीक्षित, पृष्ठ ८०, मूल्य ।=)

इस नाटक में लेखक ने विभिन्न परिस्थितियों और परम्पराओं वाले परिवारों में ऐसे सपूतों का दर्शन कराया है, जो भारत की नैतिक और आर्थिक क्रान्ति भूदान-ग्रामदान में भाग लेकर अपने परिवारवालों का हृदय-परिवर्तन करते हैं।

—अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	भूदान-रचनात्मक कार्यकर्ताओं के लिए	अ. वा. सहस्रबुद्धे	१
२.	ग्रामदान की गंगा में—	—	२
३.	नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः	मोतीलाल केजरीवाल	३
४.	बच्चों के बीच विनोबाजी !	दामोदरदास मूँदड़ा	३
५.	तंत्र-मुक्ति एवं निधि-मुक्ति के बाद	ठाकुरदास बंग	४
६.	उत्तर बुनियादी शिक्षा : ग्रामदान-विद्यालय	देवी प्रसाद	५
७.	हम सारे एक ही समाज के अवयव हैं !	विनोबा	६
८.	कालपुरुष का महान् दर्शन !	शिवाजीराव भावे	६
९.	पराक्रमी और वीर्यवान कैसे हो सकेंगे ?	विनोबा	७
१०.	संस्था-जीवन की साधना के कदम	धीरेन्द्र मजूमदार	७
११.	हमारी नागरिक समस्याएँ	महावीर प्रसाद केड़िया	८
१२.	हमें आत्मनिर्भर बनना होगा	विमला बहन	८
१३.	विनोबाजी से एक अमेरिकी छात्र की भेंट	—	९
१४.	कर्नाटक की क्रांतियात्रा से—	महादेवी	१०
१५.	गुजरात में ग्रामदान का बढ़ता प्रवाह	हरिवल्लभ परीख	१०
१६.	संस्कृति और प्रकृति के समन्वय का फल !	विनोबा	११
१७.	ग्रामदानी गाँवों में सहयोग-समिति का संगठन	वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी	११

सिद्धराज ढड्ढा, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण-प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी; टे० नं० १२८५

www.vinoba.in